आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 3 ★ मूल्य : 10 रु.
10 मार्च, 2009 ★ फाल्गुन 2065

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
जयपुर

मंगल-मूल, धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ॥

जयगुरु हस्ती
जयगुरु हीरा
जयगुरु मान
पीयें धोवन पानी, बोले मीठी वाणी यही कहे जिनवाणी ।
गहने
अलंकार
नक्काशीवाले
चमकिले
तेजस्वी
ओजस्वी
एक है वैसा, मुझे चाहिए था जैसा...
॥ स्वर्णतीर्थ ॥
प्रभावी
अदभूत
अक्षय
अर्थपूर्ण
अष्टपैलू
अगम्य
मोहर
अनमोल
अप्रतिम
माणिक
रतनलाल सी. बाफना ज्वेलर्स
सोने ◆ चांदी हिरा ◆ मोती
०२५७-२२२५९०३,३९०३ जलगाँव ◆ औरंगाबाद ०२४०-२२४४५२०,२२
जहाँ विश्वास ही परंपरा है।

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, महिमामयी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन. 2636763

卐 संस्थापक

श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक

प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नम्बर 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.),
फोन नं. 0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक

प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर- 342005, फोन नं. 0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक

नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त

रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.RJ/JPC/M-07/2009-11

卐 सदस्यता

स्तम्भ सदस्यता-रू.11000/-संरक्षक सदस्यता-रू.5000/
वार्षिक सदस्यता- रू. 50/- त्रिवर्षीय सदस्यता-रू.120/-
आजीवन सदस्यता देश में - रू. 500/-
विदेश में- रू. 5000/- इस अंक का मूल्य रू. 10/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- रू. 2500/-

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

छंदं निरोहेण उवेइ मोक्खं,
आसे जहा सिक्खियवम्मधारी।
पुव्वाइं वासाइं चरेऽप्पमत्तो,
तम्हा मुणी खिप्पमुवेइ मोक्खं।।

— उत्तराध्ययन सूत्र 4.8

स्वच्छन्द-रोध से मुक्ति मिले,
ज्यों शिक्षित अश्व कवचधारी।
पूर्ववर्ष तक अप्रमत्त चल,
शीघ्र मुक्त हो (महा) व्रतधारी।।8।।

मार्च 2009
वीर निर्वाण संवत् 2535
फाल्गुन 2065

वर्ष 66 अंक 3

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिण्टिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन: 2562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय -	महावीर की दृष्टि में नैतिकता	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
अमृत-चिन्तन-	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	9
प्रवचन-	सतां हिताय सत्यम्	-तत्त्वचिंतक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.	10
प्रासंगिक-	आचार्य श्री हीराचन्द्र प्रशस्ति	-मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.	17
	महावीर का महावीरत्व : एक शाब्दिक मीमांसा	-उपाध्याय श्री रमेश मुनि जी शास्त्री	24
	आधुनिक संदर्भ में भगवान् महावीर	- श्री दुलीचन्द जैन	39
चिन्तन-	स्थानकवासी परम्परा में शिक्षाव्रत	-श्री अमितराय जैन	31
तत्त्वबोध-	जिज्ञासा-समाधान	-संकलित	45
धारावाहिक-	जम्बूकुमार (58)	-जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.	50
अंग्रेजी-स्तम्भ-	Iryapathika Sūtra	*-Dr. Priyadarshana Jain*	61
उपन्यास-	सुबह की धूप (1)	-श्री गणेशमुनि जी शास्त्री	65
नारी-स्तम्भ-	आओ घर को स्वर्ग बनाएँ	- श्रीमती रतन चोरडिया	70
युवा-स्तम्भ-	निराशा, कुण्ठा और आत्महत्या से कैसे बचें?	-श्री उदयमुनि जी म.सा.	74
स्वास्थ्य-विज्ञान-	रोग निदान में सहयोगी : यिन-यांग का सिद्धान्त	- डॉ. चंचलमल चोरडिया	78
बाल-स्तम्भ-	अनुभव की कीमत	- श्री दिनेशमुनि जी म.सा.	81
विचार-	वातावरण	-साध्वी युगल निधि-कृपा	49
	चिन्तन-कण	- श्रीमती अभिलाषा हीरावत	64
गीत/कविता-	अल्पविराम से पूर्णविराम तक	- श्री त्रिलोकचन्द जैन	23
	सिद्धान्तों से नहीं है हटना	- श्री जिनेन्द्र जैन	57
	जीने का अधिकार सभी को	- श्री अशोक कुमार बोहरा	60
	घर-घर पहुँची जिनवाणी	- श्री कस्तुरचन्द जैन	77
पक्खी पत्र-	संवत् 2066	-संकलित	58
संवाद-	समस्या-समाधान (21)		85
स्वाध्यायी परिचय-	श्री राजमल संचेती-अमलनेर	-मोहनकौर जैन	88
परिणाम-	आओं स्वाध्याय करें (20) त्रैमासिक प्रतियोगिता		90
	अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड वरीयता सूची		94
साहित्य समीक्षा-	नूतन-साहित्य	-डॉ. धर्मचन्द जैन	93
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन		96
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		107

सम्पादकीय

महावीर की दृष्टि में नैतिकता

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

भगवान् महावीर के उपदेशों में नैतिकता का सीधा-सीधा प्रतिपादन भले ही न हुआ हो, किन्तु आध्यात्मिकता से समन्वित उनके उपदेश नैतिकता के आचरण की सहज स्थापना करते हैं। श्रावक के 12 व्रतों में भी प्राणातिपात विरमण, मृषावाद विरमण, अदत्तादान विरमण, मैथुन विरमण, परिग्रह परिमाण, उपभोग-परिभोग परिमाण, अनर्थदण्ड विरमण, अतिथि संविभाग व्रत ऐसे व्रत हैं जो सीधे-सीधे नैतिकता का पोषण करते हैं। श्रावक का लक्ष्य यद्यपि आत्म-विशुद्धि है, किन्तु उसके साथ जीवन-व्यवहार की शुद्धि सिक्के के दो पहलुओं की भाँति जुड़ी हुई है। आत्म-विशुद्धि का पथ स्वतः नैतिकता का आधान करके चलता है। नैतिकता का सम्बन्ध अपने उस प्रत्येक आचरण से जुड़ा हुआ है जो परिवार, समाज अथवा दूसरे व्यक्ति के साथ व्यवहार को लक्ष्य करता है। आत्म-विशुद्धि जहाँ व्यक्तिगत शोधन का काम करती है, वहाँ उससे अभिव्यक्त नैतिकता जीवन-व्यवहार का परिष्कार करती है। कुछ व्यक्ति जो मात्र नैतिकता पर बल देते हैं वे नैतिकता के बाह्य आडम्बर में अधिक उलझ जाते हैं एवं अपने व्यवहार को दूसरों के साथ जटिलता में परिणत कर देते हैं। ऐसे व्यक्तियों का व्यवहार सामाजिक दृष्टि से कई बार कलह, विषाद, मिथ्याभिमान, विघटन, निन्दा-विकथा आदि विकारों का भी रूप ले लेता है। इसका एकमात्र कारण है- नैतिकता के साथ आत्मशुद्धि के भाव का जुड़ाव न होना। कोरी नैतिकता दूसरे व्यक्ति के अधिकार की रक्षा तो करती है, किन्तु करुणा एवं मैत्री के अभाव में वह दूसरे के प्रति तिरस्कार, अपमान, द्वेष आदि को भी जन्म देती है। भगवान् महावीर ने इसीलिए कोरी नैतिकता का उपदेश नहीं दिया, उन्होंने आत्म-विशुद्धि को लक्ष्य बनाने की सीख दी। सारे व्रत चाहे वे अणगार के हों अथवा श्रावक के, आत्म-विशुद्धि से जुड़े हुए हैं, जिनमें नैतिकता का पुट स्वतः आ जाता है।

श्रावक का अहिंसा व्रत इस बात पर बल देता है कि हम अपने समान ही

दूसरे प्राणियों के जीवन को सम्मान दें। उनकी जानबूझकर अनावश्यक हिंसा न करें। उनके जीने के अधिकार के प्रति सजग रहें। आत्म-चेतना के स्तर पर जितनी संवेदनशीलता बढ़ती है, उतना प्रत्येक प्राणी के प्रति मैत्रीभाव प्रकट होता है। फिर हम अपने क्षुद्र स्वार्थों के लिए दूसरे प्राणियों को न तो गुलाम बनाते हैं, न उनका शोषण करते हैं और न उनके स्वाभाविक अधिकारों का हनन करते हैं।

भगवान् महावीर की नैतिकता बाह्य पैमानों पर नहीं, भीतरी भावना से मापित होती है। मेरी यह नैतिक जिम्मेदारी है कि मैं अपने साथ अपने परिवारजनों, पड़ौसियों एवं सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के साथ उचित व्यवहार करूँ। किसी का शोषण न करूँ, किसी को धोखा न दूँ, किसी को भ्रमित न करूँ, अपने अभिमान की पुष्टि के लिए दूसरों का तिरस्कार न करूँ। इस उचित व्यवहार में प्राणातिपात विरमण-व्रत अथवा अहिंसा का आचरण महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। कोरी नैतिकता वाला व्यक्ति कई बार हिंसक व्यवहार पर उतारू होता है, इसका कारण है-- नैतिकता का मिथ्याभिमान, नैतिकता के बाह्य आचरण पर बल तथा आत्म-विशुद्धि के लक्ष्य से रहितता। भगवान् महावीर ने प्राणिमात्र के प्रति हिंसा के व्यवहार को त्यागने का उपदेश दिया। न केवल मनुष्य के प्रति और न केवल पंचेन्द्रिय जीवों के प्रति, अपितु चतुरिन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय एवं एकेन्द्रिय जीवों की भी हिंसा से यथासंभव बचने का उपदेश दिया तथा उसके औचित्य का कई प्रकार से प्रतिपादन किया। उन्होंने कहा- "सभी जीव जीना चाहते हैं।" अतः हमें उनके जीने के अधिकार की रक्षा करनी चाहिए। वे मात्र वध को ही हिंसा नहीं कहते। आचारांग सूत्र (1.4.2) में उन्होंने दूसरे जीवों को परिताप देने, उन्हें अशांत बनाने, उनका शोषण करने, उन्हें गुलाम बनाने को भी हिंसा की श्रेणि में लिया है। एक साधक चेतना के स्तर पर जब दूसरे जीवों में अपने समान चेतना का साक्षात्कार करता है तो वह उन जीवों को किसी भी प्रकार से कष्ट देने में रुचि नहीं रखता। इस संवेदनशीलता का विकास व्यक्ति में ज्यों-ज्यों बढ़ता है, त्यों-त्यों वह दूसरों के साथ नैतिकता का व्यवहार स्वतः करने लगता है।

महावीर की नैतिकता मात्र मनुष्यों के साथ नहीं अपितु प्राणिमात्र के साथ

जुड़ी हुई है। हिंसा नहीं करने का उपदेश प्रभु महावीर ने कर्मबन्धन से बचने के लिए भी दिया। जब-जब व्यक्ति हिंसा करता है तो हिंसा के संस्कार दृढ़ होते हैं, व्यक्ति प्रमत्त बनता है और वह विविध प्रकार के कर्मों का बंध करता है। कर्मों का बंधन आत्म-विशुद्धि में बाधक होता है। अतः आत्म-विशुद्धि का साधक हिंसा की प्रवृत्ति का अल्पीकरण करता है। जैन जीवन-पद्धति हिंसा के अल्पीकरण की पद्धति है। हम जब किसी की हिंसा करते हैं तो उसके साथ वैर बांध लेते हैं। भगवान् महावीर ने इस वैर से बचने के लिए भी हिंसा को छोड़ने की बात कही। कभी हम दूसरों की भूल, अत्याचार आदि का बदला लेने के लिए आवेश में आकर हिंसक हो जाते हैं। प्रभु महावीर इस हिंसा को भी त्यागने का उपदेश देते हुए कहते हैं- ''खून से सने वस्त्रों को खून से नहीं धोया जा सकता।'' प्रतिशोध की भावना वैर को शान्त नहीं करती। वैर की शुद्धि भीतर से होती है। कोई कितना भी बड़ा शत्रु क्यों न हो, उसके प्रति विद्वेष उत्पन्न न हो और एक इंसान के साथ जैसा व्यवहार अपेक्षित हो, वैसा व्यवहार हम करें, तो नैतिकता हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन जायेगी।

आज घरेलू हिंसा को रोकने के लिए सरकार भी चिन्तित है। महिला पर होने वाले अत्याचार की शिकायत पर कार्यवाही का बिगुल बजा है, किन्तु एवंविध उपाय व्यक्ति की आन्तरिक समझ की शुद्धि के बिना एक सीमा तक ही उपयोगी होते हैं। कुछ महिलाएँ इस कानून का दुरुपयोग करती हुई भी देखी गई हैं। एक पति यह समझे- पत्नी मेरी दासी है और मैं जैसा आदेश दूँ वैसा उसे पालन करना चाहिए, तो यह एक प्रकार का हिंसक आचरण है। पत्नी चाहे कि पति मेरी अंगुली के इशारों पर नाचे और मैं घर में मुखिया बनकर कुछ भी व्यवहार करूँ तो यह भी उसका हिंसक आचरण है। इस हिंसा के आधार पर नैतिकता का आचरण कुण्ठित हो जाता है। फिर व्यक्ति जो करना चाहिए वह नहीं करता और जो नहीं करना चाहिए वह करने लगता है। इसीलिए महावीर ने अपने विकारों पर विजय को प्राथमिकता दी है। नैतिकता केवल रुपयों-पैसों के लेनदेन में ही नहीं होती, वह जीवन-व्यवहार के प्रत्येक आचरण में निहित होती है। एक सम्पन्न राष्ट्र यदि हिंसा का सहारा लेकर दूसरे राष्ट्र को अपने अधीन बनाना चाहता है तो इसे भी अनैतिक आचरण ही कहा जायेगा। अपने स्वार्थों

की पूर्ति के लिए दूसरे की स्वतंत्रता का विखण्डन अनैतिक आचरण है। प्रत्येक व्यक्ति एवं प्रत्येक प्राणी की स्वतंत्र सत्ता स्वीकार कर उसके साथ आत्मवत् भाव से व्यवहार करने में नैतिकता सुरक्षित रहती है। दूसरे प्राणी अविकसित हैं, इसलिए हम उनके साथ कैसा भी व्यवहार कर लें; उनको हमारे द्वारा किए गए अत्याचार का बोध नहीं है, इसलिए हम उनके साथ अत्याचार कर लें तो भी महावीर की दृष्टि में यह अनैतिक आचरण है।

व्यक्ति जब काम, क्रोध, मान, माया, भय एवं लोभ से आविष्ट होता है तो वह दूसरों को अपने तुल्य समझने के भाव से रहित हो जाता है। उसमें हिंसा के विचार प्रवेश कर जाते हैं। वह यदि सावधान न हो तो मन, वचन एवं शरीर तीनों स्तरों पर हिंसक प्रवृत्ति से ग्रस्त हो जाता है। यह हिंसा उसमें अनैतिक आचरण को प्रोत्साहित करती है। अपने को उच्च एवं दूसरे को हीन मानकर अनैतिक आचरण में प्रवृत्त होना पाप है। इसलिए सूत्रकृतांग सूत्र में कहा है- '*एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचण।*' अहिंसक आचरण का यह सूत्र प्रतिपादित करता है कि ज्ञान होने पर व्यक्ति किसी की हिंसा नहीं करता। ऐसा ज्ञानी व्यक्ति अनैतिक हो, यह सम्भव नहीं।

नैतिकता में न्याय का पुट स्वतः रहता है, किन्तु वह न्याय उसी नैतिकता में रहता है जिस नैतिकता में आध्यात्मिकता रची-बसी हो। आत्म-विशुद्धि रूप आध्यात्मिकता के साथ जो नैतिकता का व्यवहार होता है, उसमें किसी के साथ अन्याय करने की कोई गुंजाइश नहीं होती। बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सबके प्रति आचरण में न्याय का व्यवहार होता है। भीतर से हम सबके प्रति '*आयतुले पयासु*' का भाव लेकर चलेंगे तो नैतिकता को थोपने की आवश्यकता नहीं रहेगी। वह आत्म-विशुद्धि के लक्ष्य के साथ व्यक्ति में परछाई की भाँति अपने-आप दृष्टिगोचर होगी। इसलिए महावीर की दृष्टि में हिंसा का त्याग आत्म-विशुद्धि और नैतिकता दोनों का साधन है।

(भगवान् महावीर के द्वारा प्रतिपादित नैतिकता को समझने का प्रयास श्रावक के व्रतों के आधार पर किया जा रहा है। इस अंक में मात्र अहिंसा/प्राणातिपात विरमण व्रत के आधार पर नैतिकता पर विचार किया गया है। आगामी अंकों में अन्य व्रतों के आधार पर भी नैतिकता के प्रतिपादन का लक्ष्य है-सम्पादक)

अमृत-चिन्तन

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

(स्याद्वाद)

- जिस प्रकार सत्य के साक्षात्कार में हमारी अहिंसा स्वार्थ-संघर्षों को सुलझाती हुई आगे बढ़ती है, उसी प्रकार स्याद्वाद जगत् के वैचारिक संघर्षों की अनोखी सुलझन प्रस्तुत करता है। आचार में अहिंसा और विचार में स्याद्वाद जैन दर्शन की सर्वोपरि मौलिकता है। स्याद्वाद को दूसरे शब्दों में वाणी और विचार की अहिंसा भी कहा जा सकता है।
- किसी भी वस्तु या तत्त्व के सत्य स्वरूप को समझने के लिए हमें अनेकान्त सिद्धान्त का आश्रय लेना होगा। एक ही वस्तु या तत्त्व को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है और इसलिए उसमें विभिन्न पक्ष भी उपलब्ध होते हैं। इन सारे पक्षों या दृष्टिकोणों को विभेद की दृष्टि से नहीं, अपितु समन्वय की दृष्टि से समझकर वस्तु की यथार्थ सत्यता का दर्शन करना ही इस सिद्धान्त की गहराई में जाना है।
- किसी वस्तु विशेष के एक ही पक्ष या दृष्टिकोण को उसका सर्वांग स्वरूप समझकर उसे सत्य के नाम से पुकारना मिथ्यावाद या दुराग्रह का कारण बन जाता है। विभिन्न पक्षों या दृष्टिकोणों के प्रकाश में जब तक एक वस्तु का स्पष्ट विश्लेषण न कर लिया जाए तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि हमने उस वस्तु का सर्वाङ्ग स्वरूप समझ लिया है। अतः किसी वस्तु को विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर देखने, समझने एवं वर्णित करने वाले विज्ञान का नाम ही स्याद्वाद है। सिद्धान्त रूप में इसे अनेकान्तवाद या अपेक्षावाद भी कहा गया है।
- एक ही व्यक्ति अपने अलग-अलग रिश्तों के कारण पिता, पुत्र, काका, भतीजा, मामा और भानजा आदि हो सकता है, किन्तु वह अपने पुत्र की दृष्टि से पिता है तो पिता की दृष्टि से पुत्र। ऐसे ही अन्य संबंधों के व्यावहारिक उदाहरण आप अपने चारों ओर देखते हैं। इन रिश्तों की तरह ही एक व्यक्ति में विभिन्न गुणों का विकास भी होता है। अतः यही दृष्टि वस्तु के स्वरूप में लागू होती है कि वह भी एक साथ सत्, असत्, नश्वर या अनश्वर, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष, क्रियाशील-अक्रियाशील, नित्य-अनित्य गुणों वाली हो सकती है। **-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार**

प्रवचन

सतां हिताय सत्यम्

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. द्वारा कल्पतरू गार्डन, कांदिवली, मुम्बई में 21 अगस्त, 2008 को फरमाए गए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतन जी मेहता ने किया है। -**सम्पादक**

सत्य क्या है? सत्य कैसा है? यह तो आत्मदद्रष्टा ही जाने। मैंने उसका जैसा अनुभव किया है वैसा ही प्रतिपादन कर रहा हूँ, वैसा ही कह रहा हूँ, यह सत्य है। एक साधक की भाषा में, एक अनुभवी की भाषा में जब पूछा गया- सत्य क्या है, तो जवाब मिला- बड़ा मुश्किल है, टेढ़ी खीर है सत्य को बताना।

सत्य वचन का योग भी है, और मन का योग भी है। उस सत्य को छद्मस्थ उपलब्ध कर सकता है, पर असत्य का छुटकारा छद्मस्थता में नहीं हो सकता। मनोयोग के चार भेद हैं- सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, मिश्र मनोयोग और व्यवहार मनोयोग। वचन के भी चार भेद हैं- सत्य भाषा, असत्य भाषा, मिश्र भाषा और व्यवहार भाषा।

साधक अवस्था में असत्य भाषण का दोष, असत्य रूपी पाप छठे गुणस्थान के ऊपर नहीं लग सकता, किन्तु असत्य का योग बारहवें गुणस्थान तक रह सकता है। यह ज्ञातव्य है कि विरति का अभाव होने पर भी इरादापूर्वक असत्य का भाषण तो सम्यग्दृष्टि जीव भी अपनी सुख-सुविधा के लिए प्रायः नहीं करता है। पहले गुणस्थान में भी सत्य का योग है और बारहवें गुणस्थान में भी असत्य का योग है। पर मिथ्यात्व की परिणति चौथे गुणस्थान से आगे नहीं है। पहले गुणस्थान में जैसे कलह है, अभ्याख्यान है, पैशुन्य है, पर-परिवाद है, सत्य में असत्य की बाधा है वैसी बाधा चौथे गुणस्थान में नहीं है। अपने-पराये का भान भूलकर मदिरा पीये व्यक्ति के समान बेभान करने वाला कर्म है - 'मोहनीय कर्म'। मोहनीय कर्म के उदय से जीव सत्य-असत्य का भान भूल जाता है।

हम कई बार चर्चा कर चुके हैं, जब तक इस असत्य का जीवन में महत्त्व है यानी असत्य से अपना मूल्यांकन है, अपनी महिमा है, अपनी महत्ता है तब तक जीव सत्य के लिए हितकारी प्रवृत्ति नहीं कर सकता। सत्य की व्युत्पत्ति है- **सतां हिताय सत्यम्।**

जो सज्जनों के लिए हितकारी होता है उसका नाम है-सत्य। विद्यमान की आस्था, अविद्यमान की गुलामी से छुटकारा। दिखता है, पर हमारा था नहीं, हो सकता नहीं। वह सब पराया है। पराये पर अहंकार के कारण से व्यक्ति गलत आचरण में प्रवृत्त हो जाता है। मैं तो अपने जीव को टटोलूँ। गुरु भगवन्त की, आचार्य भगवन्त की अनन्त कृपा है, कृपा हमेशा बरस रही है। मैंने अपनी नादानी से भुलावे में वंचित रखा है। इसमें मेरी ही कोई कमी रही है। बचपन में स्कूल में सुभाषित पढ़ा था- "हर द्वार पर एक दाता खड़ा है, कमी है इन हाथों की जिनमें कुछ ले सकें।" आचार्य भगवन्त की छप्पर फाड़कर हम सब पर कृपा बरस रही है। सेठ की कृपा बरसती है नौकर जब जी-हजूरी करे। पिता की कृपा बरसती है पुत्र जब सेवा करे। गुरु भगवन्त की निरन्तर कृपा बरस रही है। गुरु की कृपा पर गुरु का अधिकार बहुत कम है, गुरु की कृपा पर शिष्य का अधिकार है। शिष्य जो बनता सही, गुरु आप ही बन जायेगा।

मैं आज्ञा-आराधन में कितना तत्पर-तल्लीन रहता हूँ। इसमें मेरा अहंकार बाधक बनता है। भगवान् ने इसीलिए विनयश्रुत की पहले बात कही। अहंकार को तोड़ने की साधना में रत साधक मूल को छोड़कर भूल में मटियामेट हो जाता है। गोइंग बिहाइण्ड फेम (प्रसिद्धि) के पीछे भागना एक संत की आखिरी कमजोरी है। हमारे सामने कई संघों में टूटफूट हुई। कारण की खोज करें तो अधिकतर प्रसंगों में अभिमान के कारण से संघों के टुकड़े हुए हैं। क्रियोद्धार के कारण अलग होना एक बात है और अहंकार के कारण टुकड़े होना अलग है।

इस अभिमान के कारण असत्य कथन होता है। वह कैसे रसातल में पटकता है इसे देखने के लिए 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' भाग पहले में बाईसवें तीर्थंकर का इतिहास पढ़ा है। महाभारत के कथन में उपाध्याय श्री क्षीरकदंबक के तीन शिष्य थे। एक था राजा का पुत्र वसु, एक स्वयं उपाध्याय का पुत्र पर्वत और तीसरा था नारद। वसु, नारद और पर्वत तीन शिष्य थे। कभी देववाणी हुई कि इनमें से दो नरक में जायेंगे, एक स्वर्ग में जायेगा। उपाध्याय ने

समझा– राजा का बेटा तो नरक में जायेगा ही क्योंकि राजेश्वरी नरकेश्वरी। राजा ही क्या, चक्रवर्ती रसातल में जाता है, पाताल में चला जाता है यदि राज्य सुख छोड़कर संयम अंगीकार नहीं करे तो। राजा का बेटा वसु नरक में जायेगा ही। अब बचे दो। एक मेरा बेटा है और एक नारद है। इनमें नरक में कौन जायेगा, परीक्षा करनी चाहिए।

उपाध्याय ने आटे का मुर्गा एवं बकरा बनाकर पर्वत और नारद को एक-एक जानवर देकर कहा-" जहाँ कोई नहीं देखता हो, वहाँ काटकर जानवर मुझे लाकर दो। बेटा पर्वत आगे चला। यहाँ तो पशु-पक्षी दिखाई दे रहे हैं, वे सब देख रहे हैं इसलिए और आगे चला। चलते-चलते बिल्कुल सुनसान स्थान देखा। वहाँ जमीन पर चलने वाला कोई स्थलचर प्राणी भी नजर नहीं आया। सोचा, यह स्थान पूर्णतः एकान्त है। बकरा काटा और काटकर पिताजी को दे दिया।

नारद भी रवाना हुआ। चलता गया- चलता गया, सब जगह देखा। कहीं जानवर हैं, कहीं पैड़-पौधें हैं। वह चलते-चलते गुफा में पहुँचा। यहाँ तो कोई नहीं है। सोचा- मैं खुद देख रहा हूँ। भगवान् से कुछ भी छिपा हुआ नहीं है। वे सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, केवलज्ञानी हैं, केवलदर्शी हैं उनसे कोई रहस्य छिपता नहीं। उपाध्याय की आज्ञा है कोई नहीं देख रहा हो वहाँ काटना। वह वापस आ गया। कहा- मुझे ऐसा कोई स्थान नहीं मिला जहाँ कोई देखने वाला न हो। बाहर का कोई नहीं, तो भी मैं विद्यमान हूँ, भगवान् तो सब जग देख रहे हैं। उपाध्याय समझ गए कौन स्वर्ग का और कौन नरक का अधिकारी है।

उपाध्याय के देवलोक गमन के पश्चात् उनके पद को पर्वत ने संभाला। उसके द्वारा स्वाद लोलुपता के कारण अज यानी बकरा अर्थ करके बकरे के द्वारा यज्ञ होना चाहिए ऐसा प्रतिपादन किया जाने लगा। नारद ने रोका। कहा- गुरुजी ने अर्थ किया- **'न जायते असौ अजः'**। जो उत्पन्न नहीं हो सके ऐसे बीज के द्वारा यज्ञ करना चाहिए। अज का मतलब बकरा नहीं, नहीं उगने वाला बीज है। अज के दो अर्थ हो गये। एक बकरा और एक नहीं उगने वाला धान्य।

दोनों में विवाद छिड़ गया। शर्त लगी जिसका अर्थ गलत होगा, उसे जीभ कटवानी पड़ेगी। पर्वत को सत्य का मिथ्या अभिमान था। मिथ्याभिमान

बाहर में दोष की स्वीकृति नहीं करने देता। यह झूठा अहंकार विशुद्धि के रास्ते पर आगे नहीं बढ़ने देता। इस मिथ्याभिमान से कैसे छुटकारा पाना। इसी के कारण से निरन्तर दोष फूलते-फलते चले जा रहे हैं। दो चीजे हैं- दोषी नहीं रहना और दोषी नहीं कहलाना। दुनिया क्या समझती है? मेरी आत्मा क्या समझती है? क्या मैं सही कर रहा हूँ? दुनिया क्या समझे, इस पर नहीं, मुझे अपने-आप पर न्याय करना है।

बच्चे के हाथ से गिलास फूट जाय, दूसरा गुस्सा कर ले, तीसरा गाली दे दे, चौथा और कुछ कर ले। हम क्या सोचते हैं? ऐसा नहीं करना चाहिये। खुद के हाथ से गिलास फूट जाय तो कहते हैं हम छद्मस्थ अवस्था में हैं ऐसा कहकर या समझकर खुद को क्षमा कर देते हैं। साधना का सूत्र है- सामने वाले की गलती है तो छोड़ देना, अपनी गलती का प्रायश्चित्त करके भविष्य में गलती न हो इसका संधान करना चाहिये। तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि। पाप से पीछे हटता हूँ, निन्दा करता हूँ। गरिहामि- गुरु के समक्ष आलोचना करता हूँ। भीतर में खेद की अनुभूति करता हूँ। इसमें अन्तर से पाप को नहीं दोहराने का संकल्प होता है। अप्पाणं वोसिरामि। "पाप किया था, अब नहीं करूँगा। कभी नहीं, कभी नहीं"

भीतर में जागृति आये। पूरे जीवन के लिए पाप नहीं करूँगा, यह संकल्प जगना चाहिये। पूरे जीवन का न हो तो भी पाप से अड़तालीस मिनट के लिये पूरी तरह अलग हो जाना सामायिक है। पहले पाप, पाप तो नज़र आये। व्यक्ति जब तक भीतर में ग्लानि की अनुभूति नहीं करता तो भीतर में अपराध पुष्ट होता चला जाता है, बाहर में अहंकार बढ़ता जाता है। यही फजीहत का कारण है।

जित तित करने शोभा अपनी।
या जग मांहि दिखावे तू।।
प्रकट कहाये धर्म को धोरी, अन्तर भरियो विकारे तू।
रे चेतन पोते तू पापी, पर ना छिद्र चितारे तू।।
निर्मल होय कर्म कर्म सूं निज गुण अम्बु नितारे तूं।।

दईकड़ा के विनयचन्द जी कुम्भट की बहुत सुन्दर रचना है। जैसे-तैसे करके भी तू जगत् में अपनी शोभा देखता है, दुनियां समझे यह धर्मी है, धर्म का

धोरी है, पर अन्तर में कैसे विकार भरे पड़े हैं।

सम्यग्दृष्टि नाम धरावे, सेवे पाप अठारह तू।
नरक निगोद थकी किम छूटे, जो पर हियो न धारे तू।।

भीतर में क्या है? कई बार जुबां से निकल जाता है। उस आभिनिवेशिक मिथ्यात्व को जान रहा है। सामने वाले की बात सही है, यह जानते हुए भी अपने अहंकार के कारण सही को सही नहीं कह रहा है।

गोशालक का जीव भयंकर गलती कर चुका था। भगवान् पर तेजोलेश्या छोड़कर अन्त समय में उसने अपने चेलों से कहा- "मैं जब चला जाऊँ तो मेरे सिर को गधे की पूंछ से बांधकर नगर में घुमाना, फिर पानी से सफाई करवाना।" गोशालक के भीतर में गलती स्वीकारने की भावना आई तो बारहवें देवलोक में चला गया। उधर चेलों ने सोचा- "यह तो मर गया, कहा वैसा बाहर में किया तो अपनी दुकानदारी ठप्प हो जायेगी।" चेलों ने नगर में घुमाने के बजाय कमरे में गधे की पूंछ से बांध कर कमरा पानी से धो दिया।

जिस क्षण भूल ध्यान में आये तुरन्त संशोधन करलें तो आराधक बन सकते हैं। संथारा रास्ते में नहीं पड़ा है। रोटी-पानी छोड़ने से संथारा नहीं हो जाता। काया के संग कषाय को कसना होता है। कषाय के कसने से काया का दम घुटता है। कामना नहीं निकलती तो संलेखना नहीं होती। संलेखना तब होती है जब जीव को गलती ध्यान में आती है। तब अपनी निंदा कर निःशल्य होकर पाप से अलग हटा जाता है।

गलती को गलती मानने वाले भी हैं। दो-चार ऐसे जागृत भाई-बहिन हैं जो कागज में सूची तैयार करके आते हैं। चेन्नई की एक कुंवारी बहिन है, 21 अगस्त को कल्याण मन्दिर बोला नहीं और सामायिक किए बिना टी.वी. देख ली। इस तरह दैनिक डायरी में जो-जो गलतियाँ हुईं लिखकर लाई। सावचेती रखनी पड़ती है। पौषध में पानी के छींटे लग गये। पौषध में मच्छर मर गया, प्रायश्चित्त लेते हैं। सामायिक में परठने गया, पानी के छींटे लग गये। हमको दोष निकालने की बात करनी है। पर की चर्चा अपने साथ बहुत बड़ी गद्दारी है। जब मैं दूसरों को देखूँगा तो खुद को देख नहीं पाऊँगा। साधक अपनी ओर निहारे, देखे।

हम दिन भर कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद करते रहते हैं।

अठारह पापों में से छः पाप सीधे वचन से सम्बन्धित हैं। यद्यपि मन साथ में जुड़ा है तो भी प्रमुख रूप से दूसरा, बारहवाँ, तेरहवाँ, चौदहवाँ, पन्द्रहवाँ और सतरहवाँ ये पाप सीधे वचन से सम्बन्धित हैं।

आदमी कितना व्यर्थ में बोलता है। फर्स्ट अप्रेल फूल में न जाने क्या-क्या बोल जाता है। कई तो साधु-संतों पर आरोप लगा देते हैं। भगवान् महावीर की देशना चल रही है। वाणी के द्वारा व्यक्ति अपने को कितना नीचे गिराता है? उसके घर में कहीं से पैसा आने वाला नहीं है फिर भी वाणी का पाप लगाता रहता है। शास्त्रकारों ने पर की निन्दा और स्वयं की प्रशंसा को असत्य कहा है। प्रश्नव्याकरण सूत्र संवरद्वार में इसका निषेध किया है।

व्यक्ति दूसरों की आँख से अपने को देखता है। खुद की आँख से देखना भूल जाता है, तब दूसरों को देखने का भाव जगेगा। वह सेवा के लिए संस्थाओं से जुड़ता है, पर कुर्सी की लड़ाई में इतना उलझ जाता है। संघ, सम्बन्ध, रिश्तेदारी के भीतर तक गांठे बंध जाती हैं।

हमें कितना ऊँचा जिनशासन मिला है, अन्तर में अत्यन्त आत्मीयता रखकर चलें। हाथ मारे, हृदय रोवे। फटकारने के पहले वह चाहे माँ हो या गुरु हो उसका हृदय व्यथित होता है। बाहर से भले ही कठोर अनुशासन करना पड़ सकता है, पर भीतर में वही आत्मीयता हो।

पार्श्वनाथ भगवान् और कमठ का जीव सगे भाई थे। पूर्वभव से उनका वैर शुरु हुआ। राजा ने देश निकाला दे दिया। वैर की गांठ बढ़ गई। कभी पति-पत्नी में, कभी भाई-भाई में, कभी माँ-बेटे में वैर चुकता है। आठ भव का कैसे वैर चलता है? कभी समरादित्य की, कभी अग्निशर्मा की, कभी श्रेणिक-कोणिक की कथा पढ़े।

झूठे हैं ये रिश्ते नाते, सब स्वार्थ की घात।
संभल संभल कर चलना तू यह बिछे हुए हैं काँटें
उलझ गया तू इनमें भोले मनवा
संभल कर चलना दुनियां रंग रंगीली।
सुनलो-सुनलो मेरे भय्या जरा मन की आँखें खोलो।।

आप कभी उलटा मत पकड़ना। कर्त्तव्यपूर्ति में पीछे मत रहना। एक वैर कब तक चलता है? सामने लड़ाई करना कलह है। पीछे से झूठ कलंक

लगाना अभ्याख्यान है, चुगली करना पैशुन्य है और दूसरों की निन्दा करना परपरिवाद है। जहाँ भी आपको गलती नज़र आती है, बचाव करें। किसी को गिराने की भावना नहीं आये।

विषमता की अग्नि में जाने वाला दीनता में जीता है। उसकी हवेली ऊँची हो गयी, पिताजी ने उसको ज्यादा दे दिया, हर चीज में जब तक जड़ के साथ जुड़ाव है, तब तक पाप है। अठारहवाँ पाप मिथ्यादर्शन शल्य है। अठारहवाँ पाप छूटे बिना बाकी के पाप नहीं छूट सकते। मुझे मकान, कार, बैलेंस चाहिये। इन कारणों से कैसे बचना यह हम भगवान् की हस्तीशीर्ष नगर, पुष्पकरण्डक उद्यान में सुबाहुकुमार के माध्यम से सुन रहे हैं। जो सभी के हित का साधक है।

संस्कार निर्माणार्थ विनम्र अनुरोध

वर्तमान में टी.वी., इण्टरनेट, पत्र-पत्रिकाएँ संस्कारों पर निरन्तर धावा बोल रहे हैं, ऐसे समय छोटे-बड़े, अमीर-गरीब सभी परिवारों में नैतिक, व्यावहारिक एवं धार्मिक संस्कारों की महती आवश्यकता है। परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य गुरुदेव श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा., परम श्रद्धेय उपाध्याय प्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि सन्तमण्डल की संस्कार निर्माण, संस्कार वृद्धि एवं व्यसनमुक्ति की प्रेरणा समय-समय पर प्राप्त होती रहती है। गुरुभगवन्तों की सत्प्रेरणाओं को क्रियान्वित करने हेतु संघ ने "अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र" का गठन किया है।

सभी अभिभावकों, संस्थाओं से निवेदन है कि बच्चों के व्यक्तित्व-विकास एवं संस्कार निर्माण हेतु उन्हें नजदीक के संस्कार केन्द्रों में भेजने का लक्ष्य रखें। अपने घर-परिवार में संस्कार देने तथा अपने क्षेत्र में नन्हें बालकों को एकत्रित कर केन्द्र प्रारम्भ करना, केन्द्रों की देख-रेख, अध्यापन कार्य में सेवाएँ, छात्रों को प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान करना आदि कार्यों में तन-मन-धन से अपना सहयोग प्रदान करावें।

हम संस्कार केन्द्रों के माध्यम से बालक-बालिकाओं की ज्ञानवृद्धि, विनयवृद्धि के साथ उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए प्रयास अवश्य करें।

-सचिव, अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर

आचार्यप्रवर की 71वीं जन्म जयन्ती पर

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर आचार्य श्री हीराचन्द्र प्रशस्ति

मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.

आचार्यप्रवर का 71 वां जन्म-दिवस चैत्रकृष्णा 8 तदनुसार 19 मार्च 2009 को उपस्थित हो रहा है। इसके एक माह पूर्व 20 फरवरी 2009 के दिन अपराह्न काल में जिज्ञासु जनों के बीच संघ व संघनायक आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के गुण महिमा की चर्चा चली तो मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.ने पूज्यश्री की शासनप्रभावना, प्रवचन प्रभावना, मृदुता, अनुशासन और दृढ संयम पर अपना लिखित चिन्तन सुनाया। इसका संकलन श्री धर्मेश जी चौपड़ा-बालोतरा (कवास वालों) ने किया तथा संपादन एवं प्रस्तुति श्री सम्पतराज चौधरी दिल्ली ने की है। **-सम्पादक**

हे महाव्रती!
रत्नसंघ की ज्योतिर्धर संतति, आचार्य हस्ती की कृति,
विमलतम जीवन की विरल विभूति, आचारांग की जीवन्त प्रतीति,
तुमसे प्रस्फुटित हो रही है निरन्तर ज्योति,
पंच महाव्रत की रेखाओं से रक्षित तुम्हारा जीवन
सात्त्विकता का अप्रतिम उदाहरण है।

हे मुक्ति पथ के जीवट!
तुम कर्मण्य बन कर रहते हो, कर्मण्य बन कर कहते हो
और कर्मण्य बनकर उद्बोधन देते हो-
अर्थात् स्वयं जीते हो फिर वैसा ही कहकर
आगम की इस उक्ति को चरितार्थ करते हो-
"ठिओ परं ठावइस्सामि त्ति अज्झाइयव्वं"
'यदि मैं अपने धर्म में स्थिर होऊँगा तो
दूसरों को भी धर्म में स्थिर कर सकूँगा।'

तेरी कथनी करणी एक, जो रहती सदैव नेक,
भरा है उसमें अगाध विवेक, तुमसे प्रतिबोधित हुए अनेक।
इसीलिए हे कर्मयोगी! श्रद्धावनत जन-जन करते हैं तेरा अभिषेक।

तेरा जीवन है एक पाठशाला, जिसमें सिखाई जाती है मुक्ति की वर्णमाला,
भव्यजनों को मिलता उजाला, आने वाला बन जाता निज का रखवाला।।
तुम्हारा जीवन प्रशम, संवेग, अनुकम्पा, वात्सल्य और प्रेम की
पंचधारा से निर्मित एक निर्ग्रन्थ संत की अनुकृति है।
तेरी साधना में हैं अनेक अनमोल मोती,
अतः वह बन गई है हमारी प्रेरणा पोथी।

आस्तिक्य और अनुकम्पा तुम्हारे रसायन हैं,
इन्हें जन-जन में बाँटना तुम्हारा आयोजन है।
तुम बरसाते रहते हो हर पल प्रीति, यही है अनुकम्पा की रीति।
आगम की भी यही स्वीकारोक्ति- "सव्वभूयप्पभूयस्स"
सभी प्राणियों को आत्मवत् समझने वाला स्थिरमति।

तुम दर्शन के ध्रुवतारे हो, ज्ञान में गहरे हो और संयम से संवरे हो,
तुम परीषहों से गुजरे हो, समता में ठहरे हो, निर्लिप्त बन विचरे हो।
अतः तुम जीवन बोध के अभिलेख हो, जिनवाणी की अमिट रेख हो।।

हे गुरुवर!
तुम में रत्नत्रयी का प्रसाधन है, प्रभु प्ररूपित गुणों का संवर्धन है।
तुम्हारी मृदुता में मुस्कान है,
अनुशासन में शान है,
प्रवचन में आह्वान है
पर संयम तो तेरा संविधान है।।

मृदुता के अभाव में, क्रोध के स्वभाव में,

अहं के प्रभाव में, सम्बन्धों के दुराव में।
हो रहा है बिखराव, टकराव और अटकाव,
फलस्वरूप पनप रहा है एक-दूसरे के प्रति वैरभाव।
बढ़ रहा है तनाव ही तनाव और हो रहा है मानवीय गुणों का तिरोभाव।
परन्तु हे गुरुवर! तुमने तो मन को मृदुता से जीत लिया है,
स्वयं को मृदुता के माधुर्य से ओतप्रोत कर लिया है।
तुमने मृदुता को प्रतिष्ठा दी, पहचान दी, प्रसिद्धि एवं गौरव दिया
मानो हमको तुमसे मृदुता का सौन्दर्य मिला,
अनुकम्पा का औदार्य मिला, किंवा प्रभु का साहचर्य मिला।

प्रभु ने कहा- "आणाए मामगं धम्मं", मेरी आज्ञा पालन ही धर्म है।
हे मनस्वी, तुमने प्रभु आज्ञा में आनन्द माना।
मृदुता भी प्रभु आज्ञा है जिसकी फलश्रुति है- प्रियता एवं पूज्यता।
तुम मृदु हो अतः सर्व पूज्य हो, सर्व प्रिय हो।

हे संघ के अनुशास्ता!
अनुशासन प्रगति का प्राण है, आराधना का परिधान है।
यह सफलता का सूत्र है और मुक्तिपंथ का परिपत्र है।
अनुशासन कोई बंधन नहीं वरन् पापों का विसर्जन है,
गुणों का अर्जन है, पुण्य का सर्जन है।
अतः आत्मा का अभिनन्दन है, मुक्ति का आमंत्रण है।
गुरुवर तुमने अनुशासन को जीवन में मूर्त रूप दिया,
संघ को अनुशासन का वैभव दिया
और सदाचार का सौष्ठव दिया।
एक कुशल प्रशासक के रूप में
तुम्हें अनुशासन में रहना भी आता है और रखना भी आता है।
तुम अनुशासित और अनुशास्ता दोनों ही बन गये।

तेरे अनुशासन में मर्यादा के लेखन के साथ
अव्रतों का सीमांकन है, दोषों का शमन है,
परम्परा का निर्वहन है, शास्त्रों का चिन्तन है
एवं सिद्धान्तों का रक्षण है।
इसीलिए तुम्हारा अनुशासन एक उदाहरण है,
चतुर्विध संघ में भूषण है।
संघ के प्रति तेरा समर्पण तेरा विशेषण है।
हे रत्नसंघ अनुशास्ता, तुम्हें कोटि-कोटि वन्दन है।

हे प्रवचन प्रभाकर! आगम रत्नाकर!
प्रवचन एक आध्यात्मिक स्नान है, जन-जन के लिए प्रज्ञान है।
यह जीवन का पाथेय है, अतः उपादेय है।
यह आगम की प्रस्तुति है, अतः तीर्थंकर की विद्यमानता की अनुभूति है।
तुम्हारे प्रवचन में प्रभु के उद्गार हैं, जो जीवन के मूलाधार हैं।
उनमें व्यसनों पर प्रहार है, दोषों का संहार है
एवं वीतरागता की बयार है।
तुम्हारे प्रवचन मानो जैन वाङ्मय है।
वे सर्वजन हिताय हैं, बोधगम्य हैं।

तुम्हारी वाणी में कोमलता है, संवेदनशीलता है,
भावुकता है, सरसता है, ओजस्विता है एवं
आत्मीयता की विशिष्टता है।
इसीलिये तेरे प्रवचन का प्रभाव दूर तक एवं देर तक रहता है।
उसमें सार्थकता है, अर्हता है।
तुम प्रवचन की मुखर तस्वीर हो, उपदेशकों के लिये एक नज़ीर हो।
तुमने तीर्थंकरों की लोककल्याणकारी वाणी को प्रसारित किया
और उसे अपनी साधना में उतारा।
अतः हे प्रवचन प्रबोधक, तेरा प्रभामंडल जन-जन को

प्रभावित कर रहा है, उससे उनका जीवन निखर रहा है।

आज असंयम के सुख मानवता के लिए अभिशाप बन रहे हैं,
जन समुदाय अनुस्रोत में बह रहे हैं, सदाचार के संस्कार ढह रहे हैं
और नैतिकता रो रही है।
असंयम ने मानो मानवता के समस्त गुणों को आवृत्त कर दिया है,
पर मूढ मानव यह मानने को तत्पर नहीं है।
ऐसे में तुमने उस संयम की महत्ता बताई, जिसका
आगम में आख्यान हुआ है, गाथाओं में गान हुआ है।
चिन्तकों ने इसकी व्यंजना की एवं संतों ने इसकी साधना की।

तुमने कहा- संयममय बनो, समाधान मिलेगा।
समाधान मिला तो समाधि आयेगी।
संयम भव रोग का निदान है, मुक्ति का वरदान है।
हे संयममूर्ति, तुम जीव-अजीव के स्वरूप को जानते हो।
इसलिये संयम के स्वरूप को भी जानते हो।
तुम संयम में अडिग हो अतः काल का प्रवाह तुम्हें बहा न सका।
तुम साधना में निष्ठ हो अतः परीषह तुम्हें झुका न सका।
सांसारिक सुखों में दुःख निहित है, यह तुम्हें विदित है।
अतः वे तुम्हें प्रभावित नहीं कर सके।

तुम्हारा जीवन संयम में निष्ठा से प्रतिष्ठित है
उसकी गरिमा से अनुप्राणित है।

तुमने तीजे पद का गौरव खूब निभाया।
संघ ने तुझसे पाया ही पाया।
आगम का वचन है कि संयमी माननीय, वंदनीय और पूजनीय होता है।
हे पूज्यवर, तुम संयम के प्रति पूर्ण धैर्यवान हो,
अतः प्रतिबुद्धजीवी हो।

तुम्हारा संयम संसार से प्रतिस्रोत रूप है,
पर मुक्ति के अनुरूप है।
हे धर्म तीर्थ के सारथि!
तुम्हारे व्यक्तित्व में वीतरागता झलकती है,
तेजस्विता उभरती है, प्रभाव में संस्तुति है।
तुम्हारे आचरण में अहिंसा, वाणी में स्याद्वाद और
चिन्तन में अनेकान्त के समावेश ने तुम्हारा जीवन
महानताओं की महिमा से मंडित कर दिया है।
तुम्हारा जीवन हमारे लिये धर्म-साधना का निमित्त हो गया है।

हे धर्मतीर्थ के प्रवक्ता,
पूर्वाचार्यों के प्रतिनिधि
गुरुवर हीरा!
तुम्हारे शासन में संघ नवीन उपलब्धियों में गतिमान है
एवं रत्नत्रय में वर्द्धमान है।

हीरा स्वयं में ही मूल्यवत्ता का संज्ञान है,
तेजस्विता का प्रज्ञान है, प्रशस्तता की पहचान है।
हे गुरु हस्ती के अनमोल हीरे,
तुम्हारी उत्कृष्टता की महिमा शब्दातीत है,
तुम रत्नसंघ के वो प्रबुद्ध रत्न हो,
जिसका हर अंग संयम-साधना का वितान है,
अनुष्ठान है, आह्वान है, प्रतिमान है।

अचेतन हीरे का मोल होता है बाजारों में
पर गुरु हीरा प्रतिध्वनित होता है जन-जन के जयकारों में।
हीरा कब कहता है अपनी मूल्यता
तुम भी नहीं बताते अपने गुणों की विपुलता।

आत्मश्लाघा विहीन प्रवृत्ति तुम्हारी जीवन पोथी के
हर पृष्ठ पर दृष्टिगोचर है।
तुम्हारी आस्था प्रसिद्धि में नहीं, आत्मसिद्धि में है।
तुम्हारी अभिरुचि जनरंजन में नहीं, आत्मरंजन में है।
तुम्हारी अनुरक्ति प्रतिष्ठा में नहीं, आत्मनिष्ठा में है।
तुम्हारा अनुगमन स्वयं के यशोगान में नहीं परन्तु
भगवत् प्राप्ति के अवधान में है।
तुम्हारी श्रद्धा पर-आसक्ति में नहीं, स्व की प्रतीति में है।
आराधक से आराध्य एवं पूजक से पूज्य बनने वाले
हे प्रणम्य पुरुष!
तुझे हमारे अशेष प्रणाम।

अल्पविराम से पूर्णविराम तक

श्री त्रिलोकचन्द जैन

जिन्दगी पहुँच गयी अल्प विराम तक, पता ही नहीं चला आज तक
लेकिन क्या आया बदलाव ?
स्थानक जाने का नियम पूरा निभाया,
लेकिन अब तक परोपकार मन को नहीं भाया।
स्वाध्याय-ध्यान साधना भी की है,
लेकिन अभी तक छल-कपट की गठरी भरी है।
दर्शन वन्दन गुरुजनों के भी करता रहा,
लेकिन विलासी बन तुच्छ भोगों पर मरता रहा।
दोहरा जीवन जीते-जीते अर्द्ध जीवन चला गया,
आन्तरिक गुणों के ऊपर साता सुखों का लेप लगा रहा।
लेकिन अब जिन्दगी के लेख पर पूर्ण विराम लगने से पूर्व
विचार करना है, कुछ तो करना है, तभी जाकर मरना है।
करूँ बुद्धि का उपयोग अब परोपकार में,
हृदय से बहाऊँ प्यार निश्छल व्यवहार में।
साधनामय जीवन को अन्दर-बाहर करूँ एक समान,
भोग-कुटुम्ब-देह तज, आत्म रमूँ, जब आवे पूर्ण विराम।

-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल बापू बाजार, जयपुर-302003 (राजस्थान)

महावीर जयन्ती पर विशेष

महावीर का महावीरत्व : एक शाब्दिक मीमांसा

उपाध्याय श्री रमेशमुनि जी शास्त्री (उपाध्याय श्री पुष्करमुनि जी म.सा. के शिष्य)

नाम और रूप को संसार की सीमा-रेखा में अंकित किया जाता है। उसी संदर्भ में संस्कृत-साहित्य में एक प्राचीन वाक्य "नामरूपात्मकं जगत्" दृष्टिगत होता है। नाम एवं रूप का अपने-अपने स्थान पर महत्त्व है, उसे कथमपि नकारा नहीं जा सकता। 'रूप' के विषय में विमर्श करना अभीष्ट नहीं है, अपितु 'नाम' के सम्बन्ध में विस्तार से विचार किया जा रहा है, जिससे उक्त विषय का रहस्य शत-प्रतिशत रूप से परिस्पष्ट हो सकेगा।

कोई भी व्यक्ति हो अथवा वस्तु हो, उसका कोई न कोई नाम निश्चित रूपेण होता है और कुछ न कुछ उसका अर्थ-बोध भी होता है। अज्ञात मनुष्य अथवा अज्ञात पदार्थ के मिलते ही अन्तर्मन में सर्वप्रथम प्रश्न-चिह्न उपस्थित होता है कि यह कौन है और यह क्या है? इतना ही नहीं, उसका नाम भी क्या है? नाम की अज्ञात-स्थिति में कभी-कभी उपेक्षित ही नहीं, अपितु अपमानित भी हो जाते हैं। अतएव नाम की जो महिमा है, वह वस्तुतः महतो महीयान् है। यही मूल हेतु है कि चिर अतीत की ज्योतिर्मय दिव्यात्माएँ गणनातीत काल के व्यतीत होने पर भी सम्प्रति विस्मृत नहीं हुई हैं। संख्य-संख्य, लक्ष-लक्ष और कोटि-कोटि भक्तजन अद्यावधि उनके परम-पावन नाम का सश्रद्ध स्मरण करते हैं। उनके पवित्र नाम की मालाएँ जपते हैं। नाम-स्मरण भी अपने आप में विशिष्ट परम्परा है और उत्कृष्ट साधना भी है। मैं यहाँ एक ऐतिहासिक नाम के विषय में विशद-विचार कर रहा हूँ। वह नाम कितना अर्थ-गम्भीर है, यह अग्रिम-चिन्तन के प्रकाश में परिस्पष्ट हो सकेगा, उसका अर्थ-गौरव भी ज्योति स्तम्भ के रूप में जगमगा उठेगा।

जैन धर्म के मौलिक इतिहास की परम्परा में भगवान् महावीर अन्तिम तीर्थंकर हैं। उनके नाम की अर्थवत्ता और प्राणवत्ता का जो पावन संगम हैं, वह पुनः पुनः प्रेक्षणीय है।

तीर्थंकर प्रभु महावीर के अनेक नाम हैं। उन्हें सन्मति, महति वीर, महावीर, वर्द्धमान प्रभृति अनेक पूजार्ह नामों से सम्बोधित किया गया है।[1]

भगवान् महावीर के नामकरण-संस्कार के समय राजा सिद्धार्थ द्वारा 'वर्द्धमान' नाम रखा गया था। उक्त नाम की भी अर्थवत्ता एवं गुणवत्ता चतुर्दश पूर्वधर आचार्य भद्रबाहु ने कल्पसूत्र में अंकित की है। राजा सिद्धार्थ ने नामकरण करते हुए कहा- "देवानुप्रिय! जबसे यह बालक गर्भ में आया है, उस दिन से हमारे रजत-स्वर्ण में अभिवृद्धि होने लगी है तथा सामन्त एवं राजा भी हमारे वश में हुए हैं, अतएव जब यह बालक जन्म लेगा, तब हम उसके गुणों के अनुरूप ही गुणनिष्पन्न नाम रखेंगे।"[2] अतएव कुमार का नाम 'वर्द्धमान' रखा गया। 'वर्द्धमान' नाम के सदृश ही सन्मति प्रभृति नाम भी मात्र रूढ़ नाम नहीं हैं, अपितु व्याकरण सम्मत व्युत्पत्ति मूलक हैं। तीर्थंकर प्रभु महावीर के चारित्र-ग्रन्थों में अनेकशः उक्त नामों का उल्लेख प्राप्त होता है। संस्कृत टीकाकारों ने भी उक्त नामों की महत्ता-सूचक एवं सार प्रधान व्युत्पत्तियाँ निर्मित की हैं।

'आगम-साहित्य' जैन वाङ्मंय का सर्वाधिक प्राचीन भाग है। इस विशिष्ट साहित्य में बहुविध स्थलों पर 'समणे भगवं महावीरे' का प्रयोग दृष्टिगत होता है।[3] इस पावन-प्रयोग में 'महावीर' नाम का स्पष्टतः उल्लेख मिलता है। आगमोत्तरकालीन प्राकृत एवं संस्कृत साहित्य में भी अनेकत्र 'महावीर' नाम ही प्रयुक्त हुआ है।[4] इसी प्रसंग में एक प्रश्न उपस्थित होता है कि 'महावीर' शब्द प्रारम्भ में किसके द्वारा और किस दृष्टि से प्रचलित हुआ? एतदर्थ मैंने पुनरपि 'कल्पसूत्र' का अक्षरशः अनुशीलन किया। जिसमें स्पष्टतः उल्लेख उपलब्ध होता है कि भय-भैरव के उत्पन्न होने पर भी अचल रहने वाले, परीषह एवं उपसर्ग को शान्ति और क्षमा से सहन करने में सक्षम, प्रिय और अतिप्रय प्रसंगों में समभावी, संयमयुक्त तथा अतुल पराक्रमी होने के कारण देवताओं ने 'श्रमण भगवान् महावीर' नाम रखा।[5] उपर्युक्त प्रमाण के प्रकाश में यह सर्वथा स्पष्ट हो जाता है कि 'महावीर' नाम कोई सामान्य नाम नहीं है। भयंकर परीषह और विकट से विकट उपसर्ग को ज्योतिर्मय महाप्रभु महावीर ने अपने साधना-काल में समतापूर्वक सहन किया, अणुमात्र भी विचलित नहीं हुए। जैसे मेरुपर्वत उग्र से उग्र झंझावातों से भी अकंपित रहता है उसी प्रकार प्रभु महावीर भी परीषह-उपसर्ग के झंझावातों में अकंपित रहे, अविचल रहे। अतएव दिव्य-दृष्टि देवों ने उन्हें 'महावीर' नाम से अभिहित किया। निष्कर्ष यह है कि उन्हें यह नाम अपने अप्रतिम धैर्य, अनुपम सत्साहस और अविचल साधना-निष्ठा के बल पर

भक्ति-भाव से भक्त देवों द्वारा प्राप्त हुआ है।

साधना-काल में भगवान् महावीर कितने अधिक अकंप रहे, अविचल साधक रहे हैं, कतिपय संकेत रूप में संक्षिप्त उल्लेख करना उपयुक्त प्रतीत होता है। साधना-काल से संदर्भित भगवान् महावीर के प्रति अतिशय युक्त उपमाओं की एक प्रलम्ब-शृंखला है। उसमें प्रायः समग्र शब्द प्रभुवर महावीर की अविचल-दृढ़ता एवं अनुपम धीरता का उन्मुक्त उद्घोष करते हैं, यथा-

कांस्य पात्र के सदृश-निर्लेप- कांस्य के पात्र पर जिस प्रकार जल-बिन्दु की आर्द्रता नहीं रह पाती है, उसी प्रकार महाप्रभु महावीर की आत्मा पर राग-द्वेष मूलक किसी भी अनुकूल एवं प्रतिकूल घटनाओं का कोई प्रभाव अंकित नहीं हो पाता था अर्थात् उनकी चेतना निर्लेप रहती थी।

मेरु के समान निष्कम्प- प्रलय के युग में भी पर्वतराज मेरु सर्वथारूपेण निष्कम्प रहता है। महाप्रभु महावीर की निष्कम्पता भी इसी प्रकार परमोत्तम कोटि की है।

शंख के समान निरंजन- जिस प्रकार शंख श्वेत होता है, अतीव उज्ज्वल होता है। उस पर कोई रंग नहीं होता है उसी प्रकार श्रमण भगवान् महावीर भी प्रतिपल-प्रतिक्षण निरंजन एवं निर्विकार रहे।

सागर के समान गम्भीर- जिस प्रकार जलाशयों में समुद्र की गम्भीरता चिर-विश्रुत हैं। सहस्र-सहस्र सरिताओं का प्रतिपल जल-प्रवाह पाकर भी वह मर्यादा-विहीन नहीं होता है। उसी प्रकार तीर्थंकर प्रभु महावीर भी मान-अपमान प्रभृति के भीषण-प्रवाहों में कदापि मर्यादाहीन अर्थात् क्षुद्र नहीं हुए।

हाथी के समान शोण्डीर- युद्ध में भयंकर बाण-वर्षा में भी शौर्य-धारक। आगम-वाङ्मय में उक्त भाव को 'संगाम सीसे इव नागराया' जैसे वीरतापूर्ण शब्दों से अभिव्यक्त किया गया है। महाप्रभु महावीर अतीव भीषण उपसर्गों के महायुद्ध में पश्चात् पद नहीं होने (पीछे नहीं हटने)वाले गन्ध हस्ती के सदृश अग्रवीर रहे हैं।

वृषभ के समान पराक्रमी- जिस प्रकार महान् वृषभ अपने समग्र पराक्रम के साथ रथ आदि के भार को वहन करता है, फलतः धुरन्धर होने का गौरव पद प्राप्त करता है, उसी प्रकार भगवान् महावीर भी तप-त्याग, संयम-समता आदि साधना के भार को एवं भयंकर उपसर्गों को अत्यधिक प्रसन्नता से वहन करने वाले महान् पराक्रमी वीर रहे हैं।

सिंह के समान दुर्द्धर्ष– वन का राजा सिंह भीषण–वन में निर्भय रूपेण विचरण करता है। भयग्रस्त होकर इतस्ततः भागने का प्रयत्न नहीं करता है। उसी प्रकार श्रमण प्रभु महावीर भी सामान्य उपसर्गों तथा देव–दानवों के द्वारा किये गये भयंकर उपसर्गों से भी सर्वथारूपेण भयमुक्त रहे हैं। उन्होंने अपना साधनापथ नहीं बदला।

वायु के समान अप्रतिबद्ध–वायु को किसी भी प्रकार की प्रतिबद्धता नहीं है, वैसे ही महावीर प्रभु अप्रतिबद्ध विहारी रहे हैं। वे शरद् ऋतु के जल के समान अतीव निर्मल, कमल पत्र के समान निर्लिप्त और भारण्ड पक्षी के समान अप्रमत्त हैं।

आकाश के समान निरवलम्ब– जिस प्रकार आकाश को स्थिर रहने के लिए किसी आधार की अपेक्षा नहीं होती है। उसी प्रकार महावीर प्रभु किसी भी सहायक की अपेक्षा नहीं रखते थे।

जीव के समान अप्रतिहत गति के धारक– जिस प्रकार आत्मा की गति का कोई अवरोधक नहीं हो सकता उसी प्रकार प्रभु महावीर भी अवरोध–मुक्त गतिशील रहे हैं।

प्रभु महावीर सुधाकर के समान अति सौम्य, दिवाकर के समान परम तेजस्वी, परीक्षित उत्तम स्वर्ण के सदृश कान्तिमान, वसुन्धरा के समान समग्र स्पर्शों को सहन करने वाले, सर्वंसह क्षमाशील एवं यथोचित घृतादि की आहुति प्राप्त अग्नि के समान प्रदीप्त थे। उनकी अतिशय दीप्ति भयंकर से भी भयंकर उपसर्गों में भी कदापि क्षीण नहीं हुई। उक्त उपमाओं की एक सीमा है। अगाध–अपार महासागर को एक सीमित कलश में भर लेना जैसे असंभव है वैसे ही महाप्रभु महावीर के महावीरत्व को शब्द–घट में भर पाना कथमपि संभव नहीं है। यह संकेत मात्र है, जिस पर से महाप्रभु के महावीरत्व की झांकी प्रदर्शित की गई है। उक्त झांकी पर से उनका महावीरत्व समझा जा सकता है। लाढ़ आदि अनार्य देश भगवान् महावीर के विहार क्रम में आ गये हों, ऐसा नहीं है।[6] 'भगवान् स्वयं ने अपनी आध्यात्मिक–दिव्य शक्ति के परीक्षण हेतु अनार्य देश में पदार्पण किया। परिचित स्थानों में यह परीक्षण प्रायः असंभव हो पाता है। विषम स्थिति में पहुँचने पर ही प्रतीत होता है कि व्यक्ति स्वयं में कितना धीर, वीर एवं गम्भीर है। आराध्यदेव महावीर, महावीर इसलिये हैं कि वे स्वयं ही आये हुए कष्टों को

झेलते हुए कभी-कभी स्वयं भी कष्टों को निमन्त्रित करते हैं। अतीव भीषण कष्टों के जलते हुए दावानल में स्वयं भी सहर्ष प्रवेश करते हैं। उनका मुख कमल कभी भी अणुमात्र म्लान नहीं होता है। अनार्य देश में प्रभु महावीर पर अत्यन्त घोर एवं भयंकर उपसर्गों की बाण-वर्षा निरन्तर होती रही। अनार्य जन उन पर धूल फेंकते थे, उन्हें डंडों एवं पत्थरों से मारते थे। कुछ व्यक्ति उन पर शिकारी कुत्ते भी छोड़ देते थे और वे भगवान् के शरीर का मांस नोंच देते थे। प्रस्तुत अनार्य देश की विहार यात्रा का अतीव भीषण वृत्त है। महाप्रभु महावीर अपनी रक्षा के लिये किसी साधन का उपयोग नहीं करते थे। प्रभुवर को सुरक्षा-साधन की भी कोई अपेक्षा नहीं थी। उनका लक्ष्य ही कुछ और था। वे राग-द्वेष से सर्वथा विमुक्ति यात्रा के अपराजित पथिक थे। उन्हें मध्य के किसी भी प्रकार के विकल्पों में उलझना नहीं था। उनके लिये कहा गया है, वे संग्राम में अपराजित गजराज के समान तथाकथित भयंकर घृणा, अपमान, तिरस्कार तथा दण्ड प्रहार प्रभृति के उपसर्ग-महायुद्ध में अबाध गति से अग्रसर होते गये। महाप्रभु को साधना-काल में गणनातीत उपसर्ग आये। ताड़ना, तर्जना, अपमान एवं उत्पीड़न ने प्रायः पद-पद पर प्रभुवर की कठोर परीक्षा ली। उन सर्व उपसर्गों को त्रिविध विभाग में विभक्त किया जा सकता है। जघन्य उपसर्गों में कटपूतना का उपसर्ग महान् था।[7] मध्यम उपसर्गों में संगम का कालचक्र उपसर्ग विशिष्ट था।[8] उत्कृष्ट उपसर्गों में कानों से शलाकाएँ निकालना अत्यन्त उत्कृष्ट था।[9] उपसर्गों का यह त्रिविध वर्गीकृत रूप यथार्थपूर्ण है एवं प्रमाण पुरस्सर भी है।[10] यह साश्चर्य तथ्य है कि भगवान् महावीर का प्रथम उपसर्ग भी कर्मार ग्राम में एक ग्वाले से प्रारम्भ हुआ था[11] और अन्तिम उपसर्ग भी एक-ग्वाले के द्वारा उपस्थित किया गया।[12] देवलोक में देवराज ने विचार किया कि भगवान् महावीर का साधना पथ अतीव विकट है। अतएव महाप्रभु से प्रार्थना की- "भगवन्! मानव अज्ञानी एवं विमूढ़ है। आपको साढ़े बारह वर्ष तक उपसर्गों को सहन करना पड़ेगा। आप आज्ञा दीजिये, मैं आपकी सेवा में रह कर कष्ट-निवारण किया करूँ।"[13] महाश्रमण प्रभु ने कहा- "देवराज! आज तक यह कभी न हुआ और न कभी होगा, मुक्ति किसी की सहायता से प्राप्त की जा सके।"[14] महाश्रमण महावीर की तेजोदीप्त वाणी के समक्ष देवराज विनत हो गए। यह प्रसंग सामान्य नहीं है। इसे जितना भी असामान्य कहा जाए, उतना ही अल्प है। महावीरत्व द्योतक इतिहास की अनेक

घटनाएँ हैं। महाप्रभु महावीर 'महावीर' हैं, विलक्षण महावीर हैं। अन्तरंग जीवन का महावीरत्व भी महाप्रभु तीर्थंकर का अद्भुत है।

सारपूर्ण भाषा में यही कहा जा सकता है कि महाश्रमण प्रभु महावीर जैसे विरल ही वीर चैतन्य होते हैं, जो कुछ ही क्षणों में सर्वस्व का त्याग कर देते हैं। वे अध्यात्म-साधना के अग्निपथ पर वीरता के साथ पुष्प-पथ के समान अग्रसर हो जाते हैं। उनकी अन्तश्चेतना में न इस लोक के किसी सुख का विकल्प है और न परलोक के सुख का विकल्प है। वे महाश्रमण लोक एवं परलोक के दोनों विकल्पों से सर्वथा अतीत हैं। यथार्थता यह है कि उनका महावीरत्व शब्दातीत है। मैं भक्तिरस से निरन्तर आप्लावित अपने हृदय सागर की गहराई से इस विराट् आराध्य प्रभु महावीर को अनन्तशः सश्रद्ध वन्दन करता हूँ।

संदर्भ

1. सन्मतिर्महति वीरो, महावीरोऽन्त्य काश्यपः।
नाथान्वयो वर्द्धमानो, यत्तीर्थनीह साम्प्रतम्।। धनञ्जय नाममाला, 115

2. पुव्विं पि य णं देवाणुप्पिया! अम्हं एयंसि दारगंसि गब्भं वक्कं तं सि, इमे एयारूवे अब्भत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिसिं गब्भत्ताए वक्कंते, तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो सुवण्णेणं वड्ढामो, जाव सावएज्जेणं पीति सक्कारेण अतीव अतीव अभिवड्ढामो, सामंतरायाणो वसमागया य। तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सति, तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स इमं एयाणुरूवं गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करिस्सामो वद्धमाणो त्ति, ता अज्जं णं अम्हं मणोरहसंपत्ती जाया, तं होउ णं अम्हं कुमारे वद्धमाणे नामेणं। तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो नामधिज्जं करंति 'वद्धमाणो' त्ति।-कल्पसूत्र, सूत्र 103, आचार्य भद्रबाहु स्वामी

3. क- समवायांग सूत्र, समवाय-134, पत्र 98
ख- कल्पसूत्र, सूत्र 91
ग- आचारांग सूत्र 9/1/13
घ- सूत्रकृतांग सूत्र 1/1/1/27
ड़- दशवैकालिक सूत्र, अ. 4
च- उत्तराध्ययन सूत्र, अ. 2

4. क- पद्मचरितम्- 2/1/76, पृष्ठ 15

ख- विशेषावश्यक भाष्य, 1972

ग- त्रिषष्टिशलाका 10/2/100

घ- महावीर चरियं- 4/125

ङ-पद्मपुराण 20/67

च- तित्थोगाली पइन्नय श्लोक 620

छ- हरिवंशपुराण 60/549

ज- पउमचरियं- 2/26, पृष्ठ 10

5. समणे भगवं महावीरे कासवगोत्तेणं तस्स णं तओ नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा अम्मा पिउ संतिए वद्धमाणे, सहसम्मुइयाए समणे अयले भयभेरवाणं परीसहोवसग्गाणं खंतिखमे भीमं अरतिरतिसहे दविए वीरियसंपन्ने देवेहिं से णामं कयं समणे भगवं महावीरे ।। -कल्पसूत्र, सूत्र 104

6. आचारांग सूत्र-प्रथम श्रुतस्कन्ध, नवम अध्ययन, तृतीय उद्देशक

7. क- आवश्यक निर्युक्ति गाथा 369 ख- महावीरचरियं 6/212-213
ग- आवश्यक चूर्णि- 292 घ- आवश्यकमलयगिरिवृत्ति 283

8. क- चउप्पन्नं महापुरिस 282 से 289
ख- विशेषावश्यकभाष्य-1937

9. क- आवश्यकचूर्णि 322 ख-त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरित्र 10/4

10. क-आवश्यकचूर्णि पृष्ठ 323 ख- महावीरचरियं-7/250

11. आवश्यकमलयगिरिवृत्ति-267

12. क-त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरित्र-10/4/627-646
ख-आवश्यक हरिभद्रीया वृत्ति 326-327

13. क- महावीरचरियं 5/145
ख- आवश्यकमलयगिरिवृत्ति पृष्ठ 267
ग- त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र 10/3/38

14.क- नो खलु देविन्दा! एवं भूय वा भवइ वा भविस्सइ वा जं णं अरहंता देविंदाण वा असुरिंदाण वा णीसाए केवलनाणमुप्पाइं सु उप्पायंति, उप्पाइस्संति वा तवं वा करिंसु वा करेंति.... ।-आवश्यकमलयगिरिवृत्ति, पृ. 267
ख- त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र 10/3/29
ग- महावीरचरियं-5/145

चिन्तन

स्थानकवासी परम्परा में श्रावक-शिक्षाव्रतः एक अनुचिन्तन

श्री अमितराय जैन

पंजाबी संत संघशास्ता श्री सुदर्शनलाल जी म.सा. की परम्परा के श्री जयमुनि जी म.सा. के साथ की गई चर्चा के आधार पर श्री अमितराय जैन द्वारा प्रेषित यह लेख विचारपूर्ण है। इसमें प्रदत्त तथ्यों पर चिन्तन सम्भव है, इसी अपेक्षा से यह लेख प्रकाशित किया जा रहा है।-सम्पादक

जैन साधना-पद्धति में त्याग-प्रत्याख्यान का विशेष महत्त्व है। यदि कोई व्यक्ति सर्वत्याग करने का साहस कर सकता है तो वह महाव्रतों को अंगीकार करके मुनि-जीवन में प्रवेश करता है। महाव्रतों का पालन कितना ही कठिन क्यों न हो, पर उनके स्वरूप के संबंध में कोई संदिग्धता नहीं होती। महाव्रतों में कोई आगार नहीं होता, करण और योगों की विभिन्नताएँ नहीं होती, लघु या बड़ी आयु का विमर्श-विकल्प नहीं होता तथा सम्पूर्ण जीवन पर्यन्त पालनीय होने से समयावधि की उलझन नहीं होती। जबकि श्रावक के बारह व्रतों में कई तरह के आगार संभव हैं। करण, योगों के अलग-अलग मानदण्ड निर्धारित किये जा सकते हैं। श्रावक के व्रतों को सोने का व्यापार तथा महाव्रतों को मोती का व्यापार कहा जाता है। मोती एक अखण्ड ही खरीदा-बेचा जाएगा जबकि सोने के सैकड़ों रूप हो सकते हैं। पालना की दृष्टि से श्रावक के व्रत सरल हैं, पर समझने की अपेक्षा से ये काफी जटिल हैं। गृहस्थ जीवन की जटिलताएँ, विचित्रताएँ व्रतों को भी जटिल और विचित्र बना देती हैं।

श्रावक के बारह व्रतों में भी मूलगुण रूप से ग्रहण किए गए अणुव्रतों का स्वरूप सुगम है, पर उत्तर गुणों के रूप में वर्णित चार शिक्षा व्रतों का स्वरूप एक समान नहीं मिलता। आगमों में जो उत्तर गुणों का स्वरूप रहा होगा, उसमें और आज के युग में प्रचलित स्वरूप में काफी अन्तर आ चुका है। समय-परिवर्तन के साथ स्वरूप-परिवर्तन अपरिहार्य है। जैन आगमों में मुख्यतः तो मुनि जीवन को ही वर्णित किया गया है, पर उपासकदशांग तथा आवश्यक सूत्र

में श्रावक-जीवन से संबंधित प्रचुर सामग्री मिलती है। श्रावक आवश्यक सूत्र जो वर्तमान में प्रचलित है, अधिक पुराना नहीं है। इसकी आधी से ज्यादा भाषा तो राजस्थानी हिन्दी का मिश्रण ही है और जो प्राकृत के पाठ भी हैं वे भी साधु प्रतिक्रमण से ही उद्धृत किये गये हैं, कुछ पाठ साधु प्रतिक्रमण से लेकर स्वरूप परिवर्तन के साथ श्रावकोचित बनाये हुए लगते हैं। श्रावक के लिए प्रतिक्रमण की अनिवार्यता-आवश्यकता भी उत्तरकालीन अनुयोगद्वार के अलावा कहीं भी निर्दिष्ट नहीं की गई है। इसलिए श्रावक जीवन के वास्तविक स्वरूप को आगमिक दृष्टिकोण से समझने के लिए हमारे पास उपासकदशांग ही एक मात्र आधार रह जाता है। उपासकदशांग के प्रथम अध्ययन में आनन्द श्रावक व्रतों को ग्रहण करता है। उस प्रसंग के आधार पर व्रतों का स्वरूप निर्धारित हुआ है, परन्तु वहाँ चार शिक्षा व्रतों के संबंध में यह वर्णन नहीं आता कि श्रावक ने ये व्रत किस रूप में लिये। हमें केवल उन व्रतों के अतिचारों के आधार पर उन व्रतों का स्वरूप अनुमित करना पड़ता है।

यद्यपि पश्चाद्वर्ती ग्रंथों में श्रावक-जीवन से जुड़ी काफी बातें मिलती हैं, पर उनमें अपनी-अपनी परम्पराओं का रंग आ जाता है। दिगम्बर ग्रंथों में दिगम्बरत्व पोषक, श्वेताम्बर ग्रंथों में अपनी धारणाओं के पोषक पाठ मिलते हैं। स्थानकवासी परम्परा को कुछ छंटनी करनी पड़ती है। उपयोगी रखकर शेष पर गजनिमीलिका अपना ली जाती है। कुल मिलाकर निष्कर्ष यह निकलता है कि शिक्षा व्रतों का सारा ढाँचा विभिन्नताओं से ओतप्रोत है। इसी कारण आज भी इन व्रतों के ऊपर नए-नए प्रयोग किये जा रहे हैं, नए-नए साँचों में ढालकर इन्हें पेश किया जा रहा है। यद्यपि जनतंत्रात्मक समाज में ऐसा होना अनुचित नहीं है, पर एक ही विषय में भिन्न-भिन्न प्ररूपणाओं से सामान्य श्रद्धालु भ्रान्तिग्रस्त हो जाता है और उस समय तो और अधिक, जब एक परम्परा को अन्य परम्परा अशुद्ध बताने लगती है। अतः निर्विवाद रूप से कुछ विचार कण प्रस्तुत करने का भाव है।

पहला शिक्षाव्रत सामायिक है। एक सामायिक का कालमान एक मुहूर्त का होता है। प्राचीन समय में सामान्य श्रावक प्रतिदिन एक सामायिक से ही अपने श्रावक जीवन को कृतार्थ करता रहा होगा। 5-5, 10-10, 20-20

सामायिकों का एक साथ प्रत्याख्यान और आराधन संभवतः बहुत प्राचीन परम्परा नहीं रही होगी। यदि पूर्णशुद्धि एवं तन्मयता के साथ एक सामायिक भी सम्पन्न हो जाए तो अपर्याप्त नहीं रहेगी।

दूसरा शिक्षाव्रत है- देशावकाशिक, जिसका व्रत क्रमांक दसवाँ है। इसका मौलिक स्वरूप क्या रहा होगा, निर्णय कर पाना कठिन है, फिर भी शब्दों के विश्लेषण से तथा इस व्रत के पाँच अतिचारों के चिंतन से एक विचार बना है कि श्रावक यदि संभव हो तो कुछ दिनों के लिए अपने व्यवसाय से, गृहस्थोचित दायित्वों से देश (आंशिक) अवकाश (छुट्टी) लेकर एकान्त में धर्माराधना करे। उसके भोजन वस्त्रादि की व्यवस्था अन्य व्यक्ति संभाले। जैसे शिविर जीवन शैली में बाह्य संपर्कों से सर्वथा पृथक् रहकर अध्यात्म के उच्चतर सोपानों पर चढ़ने का प्रयास किया जाता है। शिविरों में अभ्यास करने वाले व्यक्ति स्वेच्छा से कोई वस्तु मँगवा-भिजवा नहीं सकते, औरों से सम्पर्क बनाने के लिए आवाज नहीं दे सकते, संकेत नहीं कर सकते, किसी वस्तु का प्रक्षेपण नहीं कर सकते। (विपश्यना के शिविर इसका समुचित उदाहरण हैं) इसी प्रकार प्राचीन काल में दसवें व्रत के अन्तर्गत श्रावक को कुछ दिनों का अवकाश लेकर गहन धर्माभ्यास करना होता था। इस व्रत के अन्तर्गत आहारादि पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता, केवल सीमित क्षेत्र में रहना, मौन रखना आदि ही उसके मुख्य अंग होते हैं। ऐसा शब्दाधारित विश्लेषण से फलित हुआ है।

परन्तु जैन इतिहास में जैसे-जैसे ध्यान की प्रक्रिया समाप्त होने लगी, वैसे-वैसे इस व्रत की परिपालना में भी विविधता का प्रवेश हो गया। वर्तमान में यह व्रत छठे दिशा-परिणाम और भोगोपभोग परिमाण का दैनिक संस्करण बनकर उभरा तथा इसके तीन मान्य प्रचलित रूप दिखाई देते हैं- 1.दया, 2.संवर, 3. चौदह नियम। जब मूल शेष नहीं रहता तब उसके रूपान्तरण करने की सबको छूट मिल ही जाती है।

दया का प्रारम्भिक रूप तो वही था जो मूलतः शिविर जीवन का था। अन्तर था केवल समय की अवधि के संबंध में। शिविर जीवन में सात-आठ दिन का अवकाश अपेक्षित होता है जबकि दयाव्रत आदि में एक अहोरात्र का। दूसरा अन्तर उस काल के सदुपयोग के संबंध में है। पहले 7-8 दिनों में ध्यान-

मौन का सघन अभ्यास किया जाता था। दयाव्रत में केवल सामायिक-स्वाध्याय-धर्म चर्चाओं की मुख्यता हो गई। दयाव्रत का मान्यता प्राप्त काल 24 घण्टे का रहा। जो श्रावक-श्राविका अपने घरेलू और व्यावसायिक दायित्वों से बच नहीं सकते, उन्हें दसवें व्रत में उपस्थित रहने के लिए दूसरा विकल्प दिया कि रात-भर के लिए धर्मस्थान में रहकर धर्माराधन करें। यह संवर बन गया। यद्यपि संवर का अधिकांश काल तो निद्रा में ही व्यतीत हो रहा है, पर भावुक हृदयों के लिए यह संतुष्टि पर्याप्त है कि आरम्भ-समारम्भ की क्रियाओं से पंखे, बिजली, ए.सी. के प्रयोग से गद्देनुमा पलंगों से निवृत्ति तो ली ही है। यद्यपि देशावकाश की मूल धर्म से काफी दूरी हो गई, लेकिन गृहस्थ जीवन की मजबूरियाँ हैं। कुछ श्रावक रात्रि को भी गृह त्याग करने में असमर्थ होते हैं, लेकिन वे दसवें व्रत के लाभ से वंचित नहीं रहना चाहते, उन्हें हमारे पूर्वजों ने तीसरा विकल्प दिया है- वह है चौदह नियमों का। इस व्यवस्था में श्रावकों ने कुछ शिथिलता तथा कुछ कठोरता अपना ली। मूल भावना तो शिथिल हो गई, पर दिशाव्रत को एक दिन के लिए और कठोर बना लिया तथा भोगापभोग परिमाण व्रत के नियमों को एक दिन के लिए अधिक सीमित रूप में निर्धारित कर लिया। इस तरह दसवें व्रत के ये भग्नावशेष हमारे पास आज तक बचे हैं।

ग्यारहवें पौषध व्रत में श्रावक के लिए एक-दो या तीन दिन के लिए पौषधशाला में व्यापार-शृंगार-आहार-आरम्भ-समारम्भ, सुख-सुविधा सब छोड़कर पूर्णतः निवृत्त हो जाना अभिहित था। आहार के दीर्घकालीन त्याग को सामान्य श्रावक के लिए निभाना कठिन होता है, अतः इस व्रत की अवधि अल्प रखी गई, परन्तु प्रगाढ़ता ज्यादा डाल दी। अधिकतर तो पौषध एक अहोरात्र का ही विहित है, पर कहीं-कहीं श्रावकों ने दो या तीन दिन के भी पौषध किए हैं। आहार का वर्जन होने से पौषध की परम्परा कई दिनों तक खींचनी कठिन हो जाती है। अतः तीन दिन भी काफी हैं।

वर्तमान समय में कुछ व्यवस्थाएँ अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार भी बदली और ढाली जा रही हैं, अतः कुछ ऊहापोह होता है। कुछ चिन्तनीय विषय निम्न हैंः-

1. आठ प्रहर (कहीं-कहीं बारह प्रहर) का पौषध यदि चौविहार हो तो वह

पौषध है, इस बात पर सभी सहमत हैं।

2. आठ प्रहर के पौषध में यदि जल का आगार रख लिया जाता है तो वह पौषध की श्रेणी में आता है या नहीं, इसमें मतभेद है। कुछ का मानना है कि वह पौषध न होकर संवर है। कुछ उसे दसवाँ पौषध नाम भी देते हैं। इस सन्दर्भ में अपनी परम्परा रही है कि यदि आठ प्रहर तक निरन्तर धर्माराधना होती है तो उसे प्रतिपूर्ण पौषध कहा जाता है। यदि पानी लिया जाए तो तिविहार प्रतिपूर्ण पौषध, यदि पानी नहीं लिया जाए तो 'चउविहार प्रतिपूर्ण पौषध'। इसके पीछे कारण यह है कि पूर्व काल में उपवास और पौषध दोनों ही अनुष्ठान चउविहार होते थे। कालक्रम से पानी की आवश्यकता पड़ी। पानी लेने पर भी उपवास यदि उपवास रह सकता है तो प्रतिपूर्ण पौषध ही रहना चाहिए। उसकी अन्य संज्ञा नहीं होनी चाहिए, न ही अल्प मूल्यांकन। यद्यपि 'दसवाँ पौषध' शब्द भी इस व्यवस्था के लिए प्रयुक्त किया है, पर इन दो शब्दों का सामंजस्य नहीं बनता। दसवाँ है तो पौषध नहीं और यदि पौषध है तो दसवाँ नहीं। पौषध का क्रमांक ग्यारहवाँ है तथा दसवें क्रम पर देशावकाशिक है। अतः इस पौषध को हमें 'तिविहार प्रतिपूर्ण पौषध' कहना उचित रहेगा।

3. पाँच या चार प्रहर के पौषध को 'अप्रतिपूर्ण पौषध' कहना चाहिए। पाँच या चार प्रहर में ज्यादा अन्तर नहीं माना जाना चाहिए। यदि सूर्यास्त से पूर्व प्रत्याख्यान ले लिया गया है और चौबीस घण्टे के लिए आहार का त्याग है तो वह पौषध की श्रेणी में ही रखा जाएगा, पर काल की अपूर्णता के कारण 'अप्रतिपूर्ण' विशेषण से मंडित किया जाएगा। इस पौषध को भी तिविहार, चउविहार दोनों तरह से कहा जा सकता है।

4. दयाव्रत के लिए 24 घण्टे की आराधना का प्रावधान रखा जाना चाहिए तथा आहार दो बार तक सीमित रखा जाए। 12 घण्टे, 9 घण्टे या 11 सामायिकों की दया को मान्यता न दी जाए तो अच्छा है, क्योंकि किसी भी रूढ़ शब्द के साथ अधिक खिलवाड़ करने से वह विद्रूप हो जाता है और फिर मनमाने ढंग से उसका प्रयोग प्रारम्भ हो जाता है। यहाँ तक भी उल्लेखनीय है कि दया शब्द के साथ पौषध का प्रयोग न किया जाए। इससे

दोनों की सीमाएँ सुरक्षित रहती हैं। अन्यथा 'दया पौषध' शब्द का व्यवहार नई समस्याएँ खड़ी कर सकता है। यह सत्य है कि भगवती सूत्र शतक 12 उद्देशक एक में 'शंख' श्रावक के प्रसंग में खाते-पीते हुए पौषध करने का एक बार उल्लेख हुआ है, परन्तु वह एक बार उल्लेख हुआ है, अतः यह एक आपवादिक प्रयोग माना जाना चाहिए। वहाँ खाते-पीते पौषध का अर्थ 11वें पौषध व्रत की पालना नहीं है, अपितु आत्मगुणों की पोषण करने वाली कोई भी धर्मक्रिया वहाँ पौषध शब्द से निरूपित की है। बौद्ध धर्म में भी 'उपवसथ' या 'उपोसथ' की परम्परा रही है। धर्म या गुरु की उपासना ही उपवसथ और उपोसथ कहलाती थी। वही भाव जैनों के पोसह (पौषध) में समाहित है, लेकिन 11वें व्रत में पौषध का जो विधान है उसके लिए कुछ शर्तें लगाई गई हैं, यथा-ब्रह्मचर्य का पालन (नवगुप्ति सहित) मणि सुवर्ण का त्याग, मालावर्णक विलेपन का परहेज, शस्त्र मुसलादि जन्य आरम्भ-समारम्भ से बचाव, एकांत-एकाकी रहना तथा आहार का त्याग। प्रारम्भ से लेकर आज तक निरपवाद रूप से पौषध में आहारादि का वर्जन अनिवार्य रहा है। अतः हमारा कर्तव्य है कि जिस अनुष्ठान में आहार (अशन) ग्रहण हो उसके लिए पौषध शब्द का व्यवहार न करें।

भिक्षु-दया निरारंभता का विशिष्ट रूप बना है। अपने निमित्त से भोजनादि बनाने का झंझट समाप्त हो जाता है, पर आगमों में श्रमणभूत प्रतिमा धारक श्रावक के अलावा कहीं भी श्रावक के लिए भिक्षावृत्ति का प्रावधान नहीं है, इसलिए दया में आहार की शुद्धि के लिए भिक्षा की परम्परा भी चिन्तनीय है। दूसरी बात, जैनेतर समाज की है। अजैन लोग भिक्षा के लिए जाने वाले को जब अगले रोज व्यापारादि में संलग्न, गृद्ध व कपटाचरण करते देखेंगे तो उन्हें मुनि वेश से ग्लानि हो सकती है और उन्हें यह भी अनुभव हो सकता है कि यह वेष परिवर्तनीय है, इसे कभी अपना लो, कभी छोड़ दो। इसके साथ सबसे बड़ी हानि यह हो सकती है कि गृहस्थ ने लोक संपर्क से हटकर पूर्ण एकान्त और मौन पूर्वक आत्म-चिंतन के लिए समय निकाला था, वह भिक्षाचर्या की व्यस्तता में लुप्त हो जाता है। इस तरह भिक्षुदया के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलू दोनों ही प्रतीत होते हैं।

5. बारह घण्टे या इससे कम समय के लिए की गई धर्माराधना को संवर या

सामायिक नाम दिया जाए तो अधिक शालीनता रहेगी। यदि उस दौरान निद्रा का आगार है तो संवर कहा जाए और निद्रा का आगार नहीं है तो सामायिक। व्याख्यान वाचस्पति गुरुदेव श्री मदनलाल जी म. द्वारा लिखित अपूर्ण आत्मकथा से एक ऐतिहासिक तथ्य अधिगत होता है कि उनके बामनौली चातुर्मास में इक्कीस रंगी सामायिकें हुईं। जिन श्रावक-श्राविकाओं ने 9,10 या ऊपर 21 तक सामायिकें की, उनके अनुष्ठान को सामायिक के अन्तर्गत ही गिना गया। 24 घण्टे की पूर्णावधि न होने से उनकी दया नहीं मानी गई, न उसे अप्रतिपूर्ण पौषध का नाम दिया। दयाएँ अलग हुईं। इस प्रमाण से सिद्ध होता है कि 9,10 या अधिक सामायिकों के संयुक्त प्रत्याख्यान का 'दया' नाम देना एक नूतन उद्भावना है। इस प्रकार नई धारणाएँ कोई अर्थ तो सिद्ध करती नहीं, बल्कि चर्चाओं को जन्म जरूर दे देती हैं।

कुछ समस्याएँ श्रावक वर्ग के सामने और हैं। एक सामायिक के प्रत्याख्यान के बाद अधिक समय हो जाए तो अगली सामायिक के लिए क्या करना? सामायिक के पहले संवर करना या नहीं। पौषध से पहले सामायिक प्रत्याख्यान लेना या नहीं। ये समस्यायें आगमों में तो चर्चित हुई नहीं, अतः इनका समाधान हर व्यक्ति अपनी-अपनी समझ और परिस्थिति के अनुसार दे देता है। वस्तुतः ये सभी धर्म क्रियाएँ हैं तो स्वयं में स्वतंत्र, पर श्रद्धालु वर्ग की इच्छा होती है कि एक के साथ औरों का भी लाभ उठावे। इस लाभार्जन की मनोवृत्ति से ही धर्म क्रियाएँ भावात्मक कम, द्रव्यात्मक ज्यादा हो जाती हैं। पर समस्याएँ हैं, उनका उत्तर अपनी परम्परा में जो मान्य रहा है वह निम्न प्रकार से है-

1. पहली सामायिक का प्रत्याख्यान ग्रहण करते हुए मुहूर्त एक के साथ 'उपरांत काल का संवर' ये शब्द भी बोलने चाहिए। फिर एक सामायिक से ऊपर 10,20,30,40 मिनट ऊपर होने पर भी दूसरी सामायिक का प्रत्याख्यान लिया जा सकता है और 96 मिनट में दो सामायिकें पूर्ण मानी जाएँगी।
2. पहली सामायिक का समय पूरा होते ही दूसरी सामायिक लेनी हो तो पहली को पारने की आवश्यकता नहीं है।

3. सामायिक का प्रत्याख्यान स्वयं ही करना श्रेष्ठ है, यदि पाठ याद नहीं है तो अन्य से भी लिया जा सकता है।
4. पौषध यदि प्रतिपूर्ण है तथा चउविहार हो तो सामायिक या संवर पहले और बाद में प्रत्याख्यान की आवश्यकता नहीं है। यदि अप्रतिपूर्ण या तिविहार हो तो कुछ सामायिकों का प्रत्याख्यान किया जा सकता है, केवल जलग्रहण व निद्रा से बचने के लिए।
5. दया या संवर ग्रहण करने के बाद भी सामायिक ली जा सकती है। ध्येय यही है कि सामायिक के व्याज से हमें आहार और निद्रा से बचना है। सामायिक, संवर, दया, पौषध सभी अनुष्ठानों में सावद्य योग का प्रत्याख्यान होता है, अन्तर थोड़ा-थोड़ा सा ही होता है। किसी में काल अधिक होता है, किसी में कम, किसी में निद्रा तथा भोजन का आगार होता है, किसी में नहीं। इन्हीं छोटे-छोटे अन्तरों को सावधानी से समझना चाहिए।

हमारे स्थानकवासी समाज में अच्छी धर्म जागृति आ रही है, किन्तु मूल गुणों के प्रति उदासीनता तथा उत्तरगुणों के प्रति उत्सुकता के कारण श्रावक जीवन में गहरा और ठोस परिवर्तन नहीं हो रहा। मूल गुणों के अभाव में उत्तर गुण निरर्थक तो नहीं हैं, पर अधिक सार्थक भी नहीं हैं। श्रावक-प्रतिक्रमण इस बात का साक्षी है कि शिक्षाव्रत केवल यथावसर, यथा शक्ति, यथासंभव करने के लिए है। सामायिक का अवसर आए सामायिक करूँ, पौषध का अवसर आए पौषध करूँ, साधु-साध्वी का योग मिलने पर निर्दोष दान दूँ आदि पाठ सूचित करते हैं कि अध्यात्म विकास में इन व्रतों का सार्वकालिक महत्त्व होने की बजाय अल्पकालिक ही पहल है। अतः सामायिक, संवर, दया की रुचि सम्पन्न श्रावक-श्राविकाओं को मूल गुणों अर्थात् पाँच अणुव्रतों की ओर भी अवश्य रुचि बनानी चाहिए।

-शहजादराय शोध संस्थान, मण्डी घनश्याम गंज, बड़ौत-250011 (उ.प्र.)

सूचना

उदयपुर (राज.) में जिनवाणी (मासिक) तथा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल की साहित्य सदस्यता के लिए सम्पर्क करें- डॉ. दिलीप धींग, 53, डोरे नगर, उदयपुर-02, (राज.) दूरभाष : 0294-2465043

प्रासङ्गिक

आधुनिक सन्दर्भ में भगवान् महावीर ❁

श्री दुलीचन्द जैन

आज हम इस बात पर विचार करेंगे कि तीर्थंकर महावीर ने आज से अढाई हजार वर्षों पूर्व जिन जीवन मूल्यों का प्रतिपादन किया था, उनकी आधुनिक युग में क्या उपादेयता है, क्या प्रासंगिकता है ?

आधुनिक युग विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। विज्ञान के क्षेत्र में मनुष्य ने इतनी तीव्र प्रगति की है कि सारा विश्व एक परिवार बन गया है। शिक्षा की तकनीकी का भी अभूतपूर्व विकास हुआ है। इण्टरनेट ने शिक्षा के क्षेत्र में चमत्कार पैदा कर दिया है। आज सामान्य व्यक्ति को भी सुख-सुविधापूर्ण जीवन बिताने की जो सुविधाएँ प्राप्त हैं वे प्राचीन काल में सम्पन्न वर्ग को भी उपलब्ध नहीं थीं। इसके विपरीत दूसरी ओर हम देखते हैं कि सारा विश्व हिंसा, द्वेष, तनाव और आतंकवाद से ग्रस्त है। मनुष्य की स्वार्थपरता बढ़ गई है। परिवारों के पारस्परिक सम्बन्धों में असहिष्णुता और कटुता बढ़ गई है। पर्यावरण का भयंकर विनाश हुआ है। प्रकृति के संसाधनों की तीव्र क्षति हो रही है। मनुष्य के मस्तिष्क का विकास हुआ है, पर सद्भावों का क्षेत्र पीछे छूट गया है।

अभी शिक्षा का बोलबाला है। शिक्षा दो प्रकार की होती है- पहली भौतिक शिक्षा जिसके द्वारा हम विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी **(Science and Technology)** भी इसके अंतर्गत आती है। इसके द्वारा हम हमारे भौतिक जीवन में आजीविका प्राप्त करते हैं। इसकी भी हमारे जीवन में उपयोगिता है, लेकिन केवल भौतिक शिक्षा मात्र पर्याप्त नहीं है। हमें इसके साथ आध्यात्मिक शिक्षा भी प्राप्त करनी चाहिये। यह शिक्षा जीवन में आध्यात्मिक मूल्यों अर्थात् अनुशासन, विनम्रता, परोपकार, परदुःखकातरता, करुणा, सहृदयता आदि का विकास करती है। इसके बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण है। यह आध्यात्मिक शिक्षा हमारे जीवन में ज्ञान का विकास करती है। कुन्दकुन्दाचार्य ने ज्ञान की बड़ी सुंदर परिभाषा की है-

"जेण तच्चं विबुज्झेज्ज, जेण चित्तं णिरुज्झदि।
जेण अत्ता विसुज्झेज्ज, तं णाणं जिणसासणे।।"

❁ श्री दुलीचन्द जैन, चेन्नई द्वारा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, कोलकाता के आमंत्रण पर 18 मई 2008 को कोलकाता में प्रदत्त व्याख्यान।

अर्थात् ज्ञान के अंतर्गत तीन बातें आती हैं- 1. जिससे तत्त्व का बोध होता है, 2. चित्त का निरोध होता है तथा 3. आत्मा विशुद्ध होती है, उसी को जिनशासन में ज्ञान कहा गया है।

प्रभु महावीर ने कर्मकांडों, अंधविश्वासों एवं धर्म में घुसपैठ कर बैठी हिंसक प्रवृत्तियों के विरुद्ध सशक्त आवाज बुलंद की। आचार्य विनोबा भावे ने लिखा है कि भगवान् महावीर पहले धर्माचार्य थे जिन्होंने समाज की रूढ़ियों का भंजन कर नारियों को आदर और सम्मान का स्थान दिया। उनके धर्मसंघ में 36000 साध्वियाँ थीं।

तीर्थंकर महावीर के संदेशों को विद्वज्जन प्रमुखतया तीन संदेशों में विभक्त करते हैं- अहिंसा, अपरिग्रह एवं अनेकान्त। इन तीनों की आज के युग में बहुत बड़ी आवश्यकता है। भगवान् महावीर ने अहिंसा पर सबसे अधिक जोर दिया। उन्होंने कहा- ''किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करनी चाहिये, यही ज्ञानियों के ज्ञान का सार है। अहिंसा, समता, समस्त जीवों के प्रति आत्मवत् भाव-यही शाश्वत धर्म है।'' '*मित्ती मे सव्वभूएसु वेरं मज्झं न केणइ*' के द्वारा उन्होंने संसार के सभी प्राणियों से मित्रता की बात कही।

अहिंसा के दो पक्ष हैं- सकारात्मक और नकारात्मक। हिंसा नहीं करना यह नकारात्मक पक्ष है, परन्तु आचार्य अमितगति ने 'सामायिक पाठ' में अहिंसा का सकारात्मक पक्ष प्रस्तुत किया है जो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है -

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव।।

इसके अन्तर्गत चार जीवन-मूल्य आते हैं- 1. सभी जीवों के प्रति मैत्री 2. गुणज्ञों के प्रति आदर 3. दुःखी एवं पीड़ित व्यक्तियों के प्रति करुणा और 4. अपने से विपरीत भाव रखने वालों के प्रति माध्यस्थ या तटस्थता का भाव।

भगवान् ने कहा- प्रत्येक प्राणी जीना चाहता है, मरना कोई नहीं चाहता, अतः अपनी भांति उसकी भी रक्षा होनी चाहिए। जैन धर्म ने प्रत्येक प्राणी को जीने का अधिकार **(Right to life)** दिया। महात्मा गाँधी ने श्रीमद् राजचन्द्र से अहिंसा का सम्यक् ज्ञान प्राप्त किया, इसका राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग किया तथा अहिंसक रूप से स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी। गाँधी जी के अनुसार दूसरों की पीड़ा को समझना और उसका दुःख दूर करना यही अहिंसा की मूल भावना है।

अहिंसा के साथ ही भगवान् ने अपरिग्रह का संदेश दिया। भगवान् ने

कहा– 'इच्छा हु आगाससमा अणंतिया' अर्थात् इच्छाएँ आकाश के समान अनन्त हैं। जैसे ईंधन से आग तृप्त नहीं होती, हजारों नदियों से समुद्र तृप्त नहीं होता, वैसे ही मानव की आकांक्षाएँ कभी भी तृप्त नहीं होतीं। असीमित परिग्रह एवं अनियंत्रित तृष्णाएँ विषमता को पैदा करती हैं। अतः भगवान् ने 'इच्छा परिमाण' व्रत का विधान बताया। उन्होंने कहा कि हमें सर्जन के साथ विसर्जन का भाव समझना चाहिये। आज संसार में उपभोक्तावाद बढ़ रहा है। समृद्ध देशों में संसार की केवल 25 प्रतिशत आबादी रहती है, लेकिन उन्होंने पूरे संसार की सम्पत्ति का 80 प्रतिशत भाग हथिया लिया है। एक ओर विकसित देशों द्वारा अणु और परमाणु बमों तथा विनाशकारी हथियारों के निर्माण पर 80000 करोड़ डॉलर से अधिक प्रतिवर्ष खर्च हो रहे हैं, वहीं संसार के अविकसित देशों में करोड़ों व्यक्तियों को पीने का पानी दूभर है, प्राथमिक शाला के लिए पाठशालाएँ नहीं हैं, स्वास्थ्य के लिए अस्पताल एवं डॉक्टर उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए हमें 21वीं शताब्दी में अपरिग्रह को एक सामाजिक उत्तरदायित्व एवं चुनौती के रूप में देखना होगा।

अनेकान्त दृष्टि मानवता को जैन दर्शन की अनूठी देन है। यह मनुष्य को एक तरफा या एकांगी होने से बचाती है। यह वैचारिक धरातल पर समन्वय भावना को सशक्त करती है। भगवान् महावीर ने अपने युग में 363 मत-मतान्तरों के बीच बढ़ती विषमता को सहिष्णुता एवं समन्वयवाद द्वारा हल किया। उन्होंने दूसरों के मत की निन्दा एवं भर्त्सना नहीं की। उनकी मान्यता थी कि विचारों का आदान-प्रदान करो। प्रत्येक विचारधारा में सत्य का एक अंश है और मात्र अपनी, स्वयं की मान्यता ही एक मात्र सत्य नहीं है। विभिन्न मतों का आदर करते हुए उन्होंने विषमता, जातिवाद एवं ईश्वरवाद के विरुद्ध अहिंसक क्रांति का आह्वान किया। अनेकान्त के माध्यम से उन्होंने प्रेम, मैत्री, समता, कारुण्य और समन्वय का संदेश दिया।

अब हम भगवान् महावीर के उपदेशों की प्रासंगिकता पर विचार करेंगे। आज विश्व में संयुक्त राष्ट्र संघ शान्ति स्थापित करने का कार्य कर रहा है। इसके घोषणा पत्र में लिखा है कि जिस प्रकार युद्ध का प्रारम्भ मनुष्य के मन में होता है, उसी प्रकार शान्ति की संरक्षा का कार्य भी मनुष्य के मन को प्रशिक्षित करके ही किया जा सकता है। इसी संस्था का एक अंग है– यूनेस्को **(United Nations Educational, Social and Cultural Organisation)** जो शिक्षा, समाज

और संस्कृति के विकास का कार्य करती है। यूनेस्को ने सन् 2002 में विश्व शान्ति सम्मेलन का आयोजन किया तथा नोबल शान्ति पुरस्कार प्राप्त व्यक्तियों से पूछा कि विश्व में शान्ति और अहिंसा की स्थापना के लिए आपके क्या सुझाव हैं? उन व्यक्तियों ने कहा कि शान्ति की स्थापना के लिए आवश्यक है कि विद्यार्थियों के जीवन में बाल्यकाल से कुछ मूल्यों का बीज बो दिया जाय। उन्होंने जिन मूल्यों की बात की, वे हैं- 1. सभी जीवों के प्रति सम्मान **(Reverence for all forms of life)**, 2. सही प्रकार की शिक्षा **(Right type of education)**, 3. परस्पर सहयोग द्वारा अहिंसा को व्यवहार में लाना।, 4. लड़ाई-झगड़ों का शान्तिपूर्ण तरीकों से हल।

5. सभी राष्ट्रों में स्वतंत्रता, न्याय एवं लोकतन्त्र की भावना का प्रचार।, 6. राष्ट्रों के बीच जाति, वर्ण, रंग आदि का भेदभाव समाप्त करना एवं, 7. मानवीय जीवन मूल्यों का प्रचार।

उपर्युक्त सभी सुझाव भगवान् महावीर के उपदेशों में प्रायः पहले से निहित हैं तथा उनका पालन करने से विश्व में शान्ति, पारस्परिक प्रेम, सौहार्द तथा सद्भाव स्थापित हो सकता है।

अब मैं आपको एक प्रत्यक्ष उदाहरण जो श्रीमती मेनका गाँधी के जीवन में घटित हुआ, सुनाना चाहता हूँ। वे पीपर फॉर एनिमल्स संस्था चलाती हैं तथा उन्होंने पशु-क्रूरता के विरुद्ध अभियान चलाया है। उन्होंने बताया कि एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ने उनको अमेरिका आने का निमंत्रण दिया। वे मुम्बई से विमान में बैठी। थोड़ी देर में विमान परिचारिका ने उनको पूछा- "मैं भोजन ला रही हूँ। आप खाने में क्या पसंद करेंगी? शाकाहार या माँसाहार?" उन्होंने कहा- "मैं तो अण्डा खाना भी पसंद नहीं करती। मुझे तो शुद्ध शाकाहारी भोजन चाहिये।" परिचारिका ने पूछा- "क्या आप जैन हैं?" उन्होंने कहा कि मैं जैन तो नहीं हूँ, पर जैन धर्म के नियम और सिद्धान्त मुझे अच्छे लगते हैं, मैं उनका पालन करने का प्रयास करती हूँ।

इसके आगे भी एक और घटना घटित हुई। वे अमेरिका पहुँची और उन्होंने एक सम्मेलन में भाग लिया। दोपहर को वे रेस्टोरेण्ट में भोजन कर रही थी। उसी समय एक नवयुवक भी उनकी टेबल पर भोजन करने आया। उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली था। बातचीत से पता चला वह हरियाणा से आया है तथा जैन है। होटल के एक वेटर ने उस युवक से पूछा- "आप भोजन में क्या लेना

पसंद करेंगे, शाकाहार या माँसाहार?'' जैन युवक ने कहा- 'माँसाहार।' मेनका जी चौंक उठी। उन्होंने पूछा- ''आप जैन धर्मावलम्बी हैं, फिर माँसाहार कैसे?'' युवक ने कहा- ''मैंने अमेरिका से इंजीनियरिंग की। घर पर तो माँसाहार का प्रश्न ही नहीं है। यहाँ होस्टल में कभी-कभी लेने की आदत पड़ गई।'' मेनका जी ने उसे समझाया और कहा- ''यह जो जैन धर्म की विशेषता है उसे बनाए रखो, उसे विकृत मत करो एवं माँसाहार का प्रयोग मत करो।'' मेनका जी ने उसे तर्क देकर समझाया। उनकी बात सुनकर वह युवक प्रभावित हुआ एवं उसने प्रतिज्ञा की कि मैं कभी भी माँसाहार नहीं करूँगा।

शाकाहार का प्रचार करने के लिए चेन्नई में सन् 1995 में अन्तर्राष्ट्रीय शाकाहार संगठन **(International Vegetarian Union)** का एक सम्मेलन हुआ। वहाँ पर 200 अध्यापक/अध्यापिकाएँ भी आई थीं। हमने उनसे पूछा कि हमें शाकाहार के प्रचार के लिए क्या करना चाहिए? उन्होंने कहा कि आपको विद्यार्थियों में वैज्ञानिक ढंग से प्रचार करना होगा। बाद में उनसे परामर्श करके हम लोगों ने एक योजना बनाई जिसे करुणा क्लब कहते हैं तथा एक संस्था 'करुणा अन्तर्राष्ट्रीय' की स्थापना की। इसमें हम अध्यापक एवं विद्यार्थी प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं तथा निरन्तर कार्यशालाएँ, सेमिनार एवं प्रतिवर्ष राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित करते हैं। हमें अनुभव हुआ कि जीवदया एवं शाकाहार के प्रचार का यह एक प्रभावक कार्यक्रम है तथा बाल्यावस्था में, जब विद्यार्थियों का मस्तिष्क अपरिपक्व रहता है, उनको संस्कारित करना सरल होता है। हम करुणा की कहानियाँ, नाटक आदि पर विद्यार्थियों को निःशुल्क साहित्य वितरित करते हैं। इन तेरह वर्षों में देश के 1500 विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में करुणा क्लबें स्थापित हो गई हैं जो जीवदया, अहिंसा, करुणा, पर्यावरण रक्षा, पशु क्रूरता निवारण एवं शाकाहार का प्रभावक कार्यक्रम कर रही हैं। ये क्लबें व्यावहारिक कार्यक्रमों एवं गतिविधियों के द्वारा विद्यार्थियों के हृदय को परिवर्तित कर रही हैं। आज एक लाख से अधिक विद्यार्थी और अध्यापक शाकाहारी बन चुके हैं। हमने विद्यार्थियों से चमड़े के जूतों का उपयोग नहीं करने की अपील की। 95 विद्यालयों के 1 लाख से अधिक विद्यार्थियों ने चमड़े के जूते पहनना बंद कर दिया है।

आज सबसे अधिक आवश्यकता विद्यार्थियों को संस्कारित करने की है। हमें उन्हें वैज्ञानिक ढंग से जैन धर्म का तत्त्वज्ञान समझाना होगा। दिवाकर

प्रकाशन आगरा से जैन धर्म की कहानियों की 200 पुस्तकें हिन्दी एवं अंग्रेजी में प्रकाशित की हैं। उन्होंने पच्चीस बोल पर एवं जैन तत्त्वज्ञान पर अंग्रेजी एवं हिन्दी में चित्रात्मक सुन्दर पुस्तकें प्रकाशित की हैं। उनके द्वारा जैन धर्म को रोचकता से समझाया जा सकता है। इसी प्रकार पोस्टर, चार्ट, प्रश्नोत्तर एवं सी.डी. द्वारा भी प्रचार किया जाना चाहिए। आपको यह जानकर हर्ष होगा कि चेन्नई के मद्रास विश्वविद्यालय में जैन धर्म की उच्चस्तरीय पढ़ाई के लिए पिछले बीस वर्षों पूर्व जैन विद्या विभाग **(Department of Jainology)** स्थापित किया गया था जहाँ एम.ए., एम.फिल्. एवं पी.एच्-डी. की उच्चस्तरीय कक्षाएँ ली जाती हैं तथा शोध कार्य भी होता है। इसी विभाग द्वारा समाज में प्राकृत भाषा की पढ़ाई करायी जाती है, जिसमें पचास महिलाएँ प्रतिमाह भाग लेती हैं।

डॉ. रामजी सिंह, जो जैन विद्या के तत्त्वज्ञ हैं, का कथन है कि जैन धर्म में 200 से अधिक सुन्दर कथाएँ जिन्हें टी.वी. एवं सिनेमा के जरिये प्रदर्शित किया जा सकता है तथा उसका रामायण एवं महाभारत की तरह प्रचार किया जा सकता है। आज जैनविद्या पर एक विश्वविद्यालय लाडनूँ में है। इस तरह के कई विश्वविद्यालयों की स्थापना की आवश्यकता है।

आज जैन समाज की सामूहिक आवाज **(Collective Voice)** नहीं है। कभी हमारे समाज के संसद में 50 प्रतिनिधि थे, अब मात्र तीन हैं। हमारा संगठन कमजोर हो गया है तथा हम सम्प्रदायों में बंट गए हैं। भारत में एक करोड़ से अधिक जैन हैं, पर सरकारी आंकड़ों के अनुसार हम मात्र 42 लाख हैं। अतः हमें एक सूत्र में गुम्फित होने की आवश्यकता है।

आज युग का तकाजा है कि हम नई पीढ़ी को एवं राजनीतिज्ञों को जैन धर्म के सार्वभौमिक सिद्धान्तों से परिचय कराएँ। वैश्वीकरण के इस युग में टी.वी. और इण्टरनेट द्वारा जो पाश्चात्त्य प्रभाव नई पीढ़ी पर पड़ रहा है, उसकी विकृतियों को दूर कर जैन संस्कारों की स्थापना करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। भगवान् महावीर ने उपदेशों द्वारा मानव को मैत्रीपूर्ण, नैतिक और प्रामाणिक जीवन जीने का जो मार्ग बताया था उसे प्रचारित करने की आवश्यकता है। उसका पालन करने से व्यक्तिगत जीवन का विकास तथा समाज एवं विश्व में शान्ति की स्थापना हो सकती है।

-अध्यक्ष, करुणा अन्तर्राष्ट्रीय, 70, शम्बूदास स्ट्रीट, चेन्नई-600001

तत्त्वबोध

जिज्ञासा-समाधान

जिज्ञासा–सामान्य केवली तथा तीर्थंकर केवली को नवकार मंत्र में कौनसे पद में मानना चाहिए?

समाधान–तीर्थंकर केवली को तो सभी परम्पराओं ने प्रथम पद में ही माना है, किन्तु सामान्य केवली के बारे में दो मान्यताएँ प्रचलित हैं। आगमों में अधिकांशतः अरिहन्त का अर्थ तीर्थंकर से लिया गया है, अतः प्रथम पद में केवल तीर्थंकर को लिया जाता है और कतिपय स्थलों पर सामान्य केवली को भी अरिहन्त माना गया है, इसलिये सामान्य केवली को भी प्रथम पद में ही लेना चाहिये। आगम प्रमाण द्रष्टव्य हैं–

1. भगवतीसूत्र में शतक 1 उद्देशक 4 में कहा- केवली णं भंते! मणूसे अतीतं, अणंतं, सासयं, समयं जाव अंतं करेंसु? हंता, सिज्झिंसु जाव अंत करेंसु, एते तिन्नि आलावगा भणियव्वा छउमत्थस्स जहा नवरं- सिज्झिंसु, सिज्झंति, सिज्झिस्संति। से णूणं भंते! अतीतं, अणंतं, सासयं, समयं; पडुप्पण्णकरा वा, अंतिमसरीरिया वा, सव्व दुक्खाणं अंतं करेंसु वा, करेंति वा, करिस्संति वा; सव्वे ते उप्पण्णणाण-दंसणधरा अरहा जिणा केवली भवित्ता, तओ पच्छा सिज्झंति जाव अंतं करेस्संति वा? हंता गोयमा! अतीतं अणंतं, सासयं जाव अंतं करेस्संति वा।

   से णूणं भंते! उप्पण्णणाणदंसणधरे, अरहा जिणे केवली, अलमत्थु त्ति वत्तव्वं सिया? हंता गोयमा! उप्पण्णणाण-दंसणधरे, अरहा, जिणे केवली अलमत्थु त्ति वत्तव्वं सिया।

   इसी पाठ की भोलावण भगवती शतक 5 उद्देशक 5 में तथा शतक 7 उद्देशक 8 में भी दी गई है।

2. भगवती सूत्र शतक 7 उद्देशक 1 में कहा है–

किं संठिए णं भंते! लोए पण्णत्ते?

गोयमा! सुपइट्ठग-संठिए लोए पण्णत्ते, हेट्ठा विच्छिण्णे जाव उप्पिं उड्ढमुइंगार संठिए, तंसि य णं सासयंसि लोगंसि हेट्ठा विच्छिण्णंसि जाव उप्पिं उड्ढमुइंगागार-संठियंसि उप्पण्णणाण-दंसणधरे अरहा जिणे केवली जीवे वि जाणइ, पासइ, अजीवे वि जाणइ, पासइ, तओ पच्छा सिज्झइ जाव अंत करेइ।

भगवती शतक 11 उद्देशक 10 में भी उसकी भोलावण दी गई है।

3. भगवती शतक 8, उद्देशक 2 में कहा है- दस ठाणाइं छउमत्थे सव्वभावेणं ण जाणइ ण पासइ, तं जहा- 1. धम्मत्थिकायं, 2. अधम्मत्थिकायं, 3. आगासत्थिकायं, 4. जीव असरीर पडिबद्धं, 5. परमाणु पोग्गलं, 6 सद्दं, 7. गंधं, 8. कायं, 9. अयं जिणे भविस्सइ वा ण वा भविस्सइ, 10. अयं सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्सइ वा ण वा करेस्सइ। एयाणि चेव उप्पण्णणाण - दंसणधरे अरहा जिणे केवली सव्वभावेणं जाणइ पासइ, तं जहा- धम्मत्थिकायं, जाव करेस्सइ वा ण करेस्सइ।

राजप्रश्नीय सूत्र (युवाचार्य श्री मधुकर मुनिजी कृत विवेचन) में सूत्र संख्या 264 पृष्ठ-190 पर इसका उल्लेख मिलता है।

4. भगवतीसूत्र शतक 12 उद्देशक 1 में तीर्थंकर और सामान्य केवली की एक ही प्रकार की बुद्ध जागरणा बतलाई है। मूल पाठ इस प्रकार है- से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ - तिविहा जागरिया पण्णत्ता, तं जहा - बुद्धजागरिया, अबुद्धजागरिया, सुदक्खुजागरिया? गोयमा ! जो इमे अरिहंता भगवंतो उप्पण्णणाण-दंसणधरा जहा खंदए जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी, एए णं बुद्धा बुद्धजागरियं जागरंति। जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया भासासमिया जाव गुत्तबंभयारी एए णं अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति। जे इमे समणोवासगा अभिगय जीवाजीवा जाव विहरंति, ए ए

णं सुदक्खुजागरिया।

5. भगवती सूत्र शतक 25, उद्देशक 6 में जहाँ स्नातकों के पाँच भेद बतलाए वहाँ तीर्थंकर एवं सामान्य केवली दोनों को स्नातक माना है। जैसाकि कहा है- सिणाए णं भंते! कइविहे पण्णत्ते? गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा- 1. अच्छवी, 2.असबले, 3. अकम्मंसे, 4. संसुद्धणाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली, 5. अपरिसावी।

6. दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र की दशा में निदान रहित अरिहन्त, जिन, केवली की एक समान मुक्ति बतलाई है। मूल पाठ इस प्रकार है- "तएणं से भगवं अरहा भवइ जिणे केवली सव्वण्णू सव्वदंसी, सदेवमणुया सा सुराए जाव बहूइं वासाइं केवली परियागं पाउणइ, पाउणित्ता अप्पणो आउसेसं आभोएइ आभोइत्ता भतं पच्चक्खाएइ पच्चक्खाइत्ता बहूइं भत्ताइं अणसणाइं छेएइ छेएत्ता तओ पच्छा चरमेहिं ऊसासणीसासेहिं सिज्झइ जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेइ, एवं खलु समणाउसो! तस्स अणियाणस्स इमेयारूवे कल्लाण-फल विवागे जं तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ जाव सव्व-दुक्खाणमंतं करेइ ।।38।।

7. ठाणांग सूत्र के चौथे ठाणे के पहले उद्देशक में कहा है- उप्पण्ण णाण - दंसणधरेणं अरहा जिणे केवली चत्तारि कम्मंसे वेदेति तं. - वेयणिज्जं आउयं णामं गोयं।

सामान्य साधु केवलज्ञान होने पर 'अरहा जिणे केवली' अर्थात् अरिहन्त-जिन-केवली ही कहलाता है। अपेक्षा से तो ठाणांग सूत्र के तीसरे ठाणे में अवधि तथा मनःपर्यवज्ञानी को भी इन शब्दों में लिया है। परन्तु आगम के उपर्युक्त उल्लेखों का सार देखें-

(1) सभी अरिहन्त होकर मोक्ष गये हैं; जाते हैं, जायेंगे। बिना अरिहन्त बने कोई मोक्ष गया नहीं, न जाता है और न भविष्य में जायेगा।

(2) अरिहन्त लोक के स्वरूप को जानते हैं।

(3) दस बोलों को छद्मस्थ (1 से 12 वें गुणस्थानवर्ती) सर्वभावों से नहीं जानता, नहीं देखता। अरिहन्त (13 वें 14 वें गुणस्थानवर्ती) जानते-देखते हैं।

(4) जागरणा के अधिकारी में अबुद्ध जागरणा अणगारों में बताई तथा बुद्ध जागरणा अर्थात् केवली को अरिहन्त कहा।

(5) स्नातक - जिनकी संख्या 2 करोड़ से उत्कृष्ट 9 करोड़ कही, जिन्हें श्रुत व्यतिरिक्त केवलज्ञानी कहा, उन्हें अरिहन्त भी कहा अर्थात् जघन्य 2 करोड़ से उत्कृष्ट 9 करोड़ तक स्नातक - अरिहन्त हैं। ये सभी नवकार के प्रथम पद में हैं।

(6) अनिदानकृत साधु अरिहन्त बन मुक्ति पाता है।

(7) चार कर्मों का वेदन करने वाले - (वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र) अरिहन्त हैं।

(8) समर्थ समाधान भाग-2 पृष्ठ संख्या-243 में प्रश्न संख्या 1125 के उत्तर में लिखा है कि केवली को वन्दना प्रथम पद से होती है।

अस्तु स्पष्ट है कि अनेकानेक स्थलों पर तीर्थंकर मात्र को अरिहन्त कहा, द्रव्य तीर्थंकर को भी (चतुर्थगुणस्थानवर्ती भावी तीर्थंकर को भी) अरिहन्त कहा, पर वह माना नहीं जा रहा। तेरहवें गुणस्थानवर्ती को मानकर मात्र 20 तीर्थंकरों को उसमें कोई-कोई मानते हैं, पर 64 इन्द्रों के वन्दनीय, 34 अतिशय, 35 वाणी, 12 गुण आदि की अपेक्षा उन भाव तीर्थंकरों की विशिष्ट स्तुति कर, 18 दोष रहितता तथा 4 आत्मिक गुणों की समानता में सामान्य केवली को भी प्रथम पद में गिना जाना युक्तियुक्त प्रतीत होता है।

अनुयोगद्वार सूत्र में सिद्धों के गुणवर्णन में सकारात्मक गुण दो ही हैं- केवलज्ञान और केवलदर्शन। इन दोनों में तीर्थंकर एवं केवली समान ही हैं।

पंचम पद में अपेक्षा से सारे साधुओं को गिना जाता है। पर जब उसके 27 गुणों को देखा जाए तो 5 इन्द्रिय एवं 4 कषाय

को जीत चुके केवली भगवन्त के लिये 'जिते' शब्द पश्चात्वर्ती गुणों के चरम फल को प्राप्त कर वे वीतरागी महापुरुष बन चुके हैं, अतः कल्पातीत महापुरुषों में वे 27 गुण भी संख्यात्मक रूप से नहीं मिल सकते। अतः स्पष्ट है कि सामान्य केवली को भी अरिहन्त के समान नवकार मंत्र में प्रथम पद में लेना चाहिए। कहा भी है-

जघन्य दोय करोड़ केवली, उत्कृष्टा नव मान।
कर्म घातिया वेद खपाया, पाया केवल ज्ञान।।

बिड़ौना चौसठ गुण गाता, बिड़ौना चौसठ गुण गाता- जपो जी नवकार मंत्र ज्ञाता....

वातावरण

साध्वी युगल निधि-कृपा

धूप में बैठकर उष्णता से बच नहीं सकते तथा अग्नि के सामने बैठकर उसके ताप से बचा नहीं जा सकता। यदि बबूल का पेड़ अपने घर में लगाओगे तो उसके काँटों से कैसे बचोगे....? और आम का पेड़ लगाया है तो उसके मधुर फल भी अवश्य मिलेंगे। किसी को कष्ट पहुँचाया है या धोखा दिया है तो उसके कटु परिणाम से भागा नहीं जा सकता और किसी की सेवा की है या सुख दिया है तो उसके सुखद परिणामों की अनुभूति भी निश्चित रूप से होगी। जैसे एक पथिक वृक्ष की छाया में शीतलता का अनुभव करता है और समुद्र के किनारे टहलने वाला व्यक्ति शांति को महसूस करता है। ठीक उसी प्रकार मैत्री, क्षमा और सद्भाव के वातावरण में पलने वाला भी हरदम शान्ति एवं प्रसन्नता का अनुभव करता है। इसीलिए जिनवाणी कहती है- अपने आसपास ऐसा वातावरण सतत निर्मित कीजिए जिससे आपको प्रतिपल शुभ, श्रेष्ठ और उदार-विचारों का सान्निध्य प्राप्त हो सके। विवेकानन्द ने कहा है- विचार ही हमारे जीवन निर्माण का वातावरण तैयार करते हैं, अतः मस्तिष्क को उच्चतम विचारों से भर दो। प्रतिदिन उनका चिन्तन-मनन करो।

-'सुमति माला' से साभार

धारावाहिक (क्रमशः58)

जम्बूकुमार

जैनदिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- आठों स्त्रियों ने अपना-अपना तर्कबल पूरी तरह आजमा लिया फिर भी जम्बूकुमार को अपने पथ से विचलित करने में वे असमर्थ रहीं। यद्यपि पहले जैसा प्रगाढ मोह उनके हृदय में भी नहीं रह गया था, फिर भी मोह का सर्वथा उपशम भी नहीं हुआ था। अतएव आठों स्त्रियाँ मिलकर आपस में विचार विनिमय करने लगीं। अब आगे.......

बहिनों! हम लोगों ने जो आशा बांधी थी वह स्वामी के दृढ़ निश्चय रूपी चट्टान से टकराकर छिन्न-भिन्न हो गई है। अब आशा की एक भी किरण किसी ओर से फूटती नज़र नहीं आती। हम सब निराशा के घोर अन्धकार में पड़ गई हैं। भला हमने किस बात में कमी रखी है? हाथ जोड़े, पैर छुए, चरणों पर गिरीं, सब कुछ किया। हा-हा खाई, निहोरे किए, आँखों में से आँसुओं के झरने बहाए। मानवीय शक्ति की बदौलत जो कुछ किया जा सकता था, सब करके हम हार गई हैं, पर प्राणनाथ सुमेरु की भांति अचल हैं। जैसे तीव्र से तीव्र आंधी या तूफान पर्वत पर कुछ भी प्रभाव नहीं डालते उसी प्रकार हमारे हाव-भाव भी स्वामी पर प्रभाव नहीं डालते। यही नहीं, इतना सब कुछ करने पर भी स्वामी ने हमारी ओर स्नेह की दृष्टि से एक बार देखा तक नहीं। हमारा सौन्दर्य संसार की किसी भी सुन्दरी से टक्कर ले सकता है, पर स्वामी के लिए मानो वह तुच्छ है। काल्पनिक स्वर्ग में उन्होंने वास्तविकता को न्यौछावर कर दिया है।

दूसरी ने कहा- "तुम ठीक कह रही हो बहिन, प्राणनाथ का मन पाषाण की भांति हो रहा है। जो वैषयिक बातों की घनघोर वर्षा होने पर भी नहीं भीगता है, मेरी समझ में तो हमारे प्रयत्नों की सीमा हो चुकी है, अब आकृष्ट करने का मुझे तो कोई उपाय नहीं दीखता।"

तीसरी ने कहा- "बात तुम्हारी ठीक है, पर हम सब मिलकर यदि

एक बार और प्रयत्न करके देख लें तो क्या हानि है? लोक में कहावत है- 'जब तक श्वास तब तक आश'। हमें अन्तिम समय तक प्रयत्न करना चाहिए। फिर जो होगा देखा जाएगा।''

चौथी पत्नी बोली- ''देखा क्या जाएगा? कदाचित् स्वामी अपने पथ पर अड़े रहे तो हमें क्या करना होगा, यह अभी से निश्चय कर लेना चाहिए। मेरी समझ में तो हमारे सामने एक ही मार्ग रह जाएगा। और वह यही कि हमें भी सच्ची आर्य ललनाओं की भाँति अपने पति का अनुसरण करना चाहिए। स्वामी दीक्षा ग्रहण करके तपस्या करेंगे, सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास का कष्ट उठाएंगे, पैदल भ्रमण करेंगे, रूखा-सूखा आहार करेंगे, तब हम लोग क्या हवेली में बैठकर सुख से रह सकेंगी? कदापि नहीं। हमें भी साध्वी बनकर आत्म-कल्याण करने में कटिबद्ध हो जाना चाहिए। प्राणनाथ के बिना यह विशाल प्रासाद कठोर काल कोठरी के समान है, भोगोपभोग की सामग्री काले सांप के समान है, संसार का समस्त ऐश्वर्य तुच्छ है। वह सुख के बदले दुःख ही दे सकता है। जब हमारा सर्वस्व, हमारा सौभाग्य, हमारा हृदय ही हमारे पास नहीं तब हम यहाँ किस प्रकार रह सकेंगी?

चौथी पत्नी की यह बात सभी को पसन्द आई। सचमुच आर्य जाति की स्त्रियाँ पति के बिना सुखी नहीं रह सकतीं। उनका मक्खन के समान मृदुल हृदय यह नहीं देख सकता कि उनका पति कष्टमय जीवन व्यतीत करे और वे घर में बैठकर चैन की गुड्डी उड़ावें। वे अर्द्धाङ्गिनी कहलाती हैं और इस महिमामय पदवी के योग्य उनका व्यवहार होता है। वे पति के सुख को अपना सुख समझती हैं और पति के दुःख को अपना ही दुःख मानती हैं। दाम्पत्य जीवन के प्रेम का यही सच्चा स्वरूप है।

इस प्रकार स्त्रियों ने मिलकर एक निर्णय कर लिया। इसके पश्चात् सब मिलकर फिर जम्बूकुमार के पास आई और उन्हें अपनी ओर आकृष्ट करने की चेष्टा करने लगीं।

किसी ने कहा- ''प्राणनाथ! हम सबने आपके सामने कितनी प्रार्थनाएँ की हैं, कितना अनुनय-विनय किया है, परन्तु आपने उस पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। आपने हमारे ऊपर जरा-सी दया दिखाने की कृपा न की। क्या आप स्त्रियों के हृदय की कोमलता को नहीं समझते? आप

पुरुष हैं, आपके पास पुरुष का वज्र-हृदय है, फिर आप हम स्त्रियों के हृदय की कल्पना ही कैसे कर सकते हैं? कदाचित् आप स्त्री होते तो आप देखते कि इस समय हमारी क्या दुर्दशा हो रही है। हमारे हृदय में घोर वेदना हो रही है। सन्ताप की अग्नि हमको भस्म किए डालती है। निराशा के कीचड़ में फंस कर हमारे प्राण पखेरू अनन्त आकाश में उड़ जाने को तैयार हो रहे हैं। नाथ! आप हमारे जीवन हैं। जीवन न रहने पर यह शरीर किस काम का है? हमारा यह सौन्दर्य, हमारा यह सिंगार आपके बिना ठीक ऐसा ही है जैसे मुर्दे का सिंगार। अतएव कृपानिधान, हमारे ऊपर थोड़ी-सी कृपा कीजिए। संसार भर की कठोरता बटोर कर हमारे लिए ही क्या उसका संचय किया है?

प्राणाधार! हम जानती हैं कि आपको मुक्ति ललना ने भरमा लिया है और इसीलिए आप हमें तुच्छ समझकर परित्याग कर रहे हैं, फिर भी यदि एक बार ही आप हमारी ओर अनुराग भरी नज़र से देख लें तो आपका क्या बिगड़ जाएगा? क्या मुक्ति वधू इतना करने से ही रूठ जाएगी? फिर वह आपका वरण न करेगी? वह तो ईर्ष्यालु नहीं है। तब क्यों नहीं, आप एक बार हमारी ओर देख कर मुस्करा देते? सच समझिए, आपकी एक मुस्कराहट से ही हम निहाल हो जाएंगी। एक ही मुस्कराहट से हम अपने को धन्य और भाग्यशालिनी समझ लेंगी।

आपके मन में हार-जीत का प्रश्न तो नहीं उठ खड़ा है? आप यह तो नहीं सोचते कि यदि मैं इनका कहा मान लूँगा तो मैं हार जाऊँगा और यह जीत जाएँगी? यदि ऐसा हो तो इस भाव को अपने हृदय से निकाल दीजिए। हम जब आपके पैरों में गिर रहीं हैं तब हार-जीत का प्रश्न ही कहाँ है? इसके अतिरिक्त, आपको हरा कर हमें जीत मिले भी तो उस जीत का हमारे आगे क्या मूल्य है।

जम्बूकुमार अपनी पूर्ववत् स्थिरता की रक्षा करते हुए बोले- ''भद्र महिलाओं! बड़े खेद की बात है तुमने मेरे कथन को ध्यान से नहीं सुना। यदि सुना भी हो तो उस पर गंभीर विचार नहीं किया। यदि गंभीर विचार किया होता तो तुम इस प्रकार की प्रार्थना कदापि न करती। मैं कह चुका हूँ कि भोग भुजंग के समान हैं। क्या कोई एक बार भी भुजंग से अपने कटवाने की अभिलाषा करता है? देखो, सोचो, भोगोपभोगों के स्वरूप को पहचानो।

अनादि काल से भोग भोगने पर भी जब तुम्हारी आत्मा अब तक अतृप्त है और फिर भी एक बार भोग भोगने की प्रेरणा कर रही है, तब क्या वह भोग भोगने से कभी सन्तुष्ट हो सकेगी? आग कभी ईंधन डालने से नहीं बुझती। ईंधन डालने से वह और अधिक भड़कती है। इसी प्रकार भोगों को भोगने से भोग-अभिलाषा अधिक उग्र होती जाती है। जब यह सत्य है तो तुम तृप्ति के लिए विपरीत आचरण करने पर क्यों उतारू हो रही हो? आग को बुझा देने का सीधा-सादा उपाय यही है कि उसमें ईंधन मत डालो। ऐसा करने से आग बुझ जाएगी। इसी प्रकार भोगों की अभिलाषा को शान्त करने के लिए उचित उपाय यही है कि भोग भोगने का त्याग कर दो, भोगों से सर्वथा विमुख हो जाओ। तृप्ति के इस उचित उपाय को छोड़ कर तुम क्यों उलटे मार्ग पर चलना चाहती हो? अनादि काल से अब तक तुमने कितने भोग भोगे हैं? असंख्य बार स्वर्ग प्राप्त कर दिव्य भोग भोगे, असंख्य बार मनुष्य गति में राजा-महाराजा और सम्राट् बनकर उत्तमोत्तम समझे जाने वाले विषयों का आस्वादन किया, फिर भी आज ज्यों की त्यों भूख बनी हुई है। निश्चय समझो कि कामनाएँ कभी अनुसरण करने से तृप्त नहीं होती। अपनी परछाई को पकड़ने के लिए तुम चाहे जितनी तेजी से दौड़ो, चाहे जितनी देर तक, चाहे जितनी दूर तक भागो, फिर भी यह पकड़ में नहीं आती। ज्यों-ज्यों तुम पीछे दौड़ोगी वह त्यों-त्यों आगे बढ़ती जाएगी, अन्त में तुम्हें हार माननी पड़ेगी, तुम्हें थक कर वापस लौटना पड़ेगा। ज़ब तुम वापस लौटोगी तो उससे विमुख हो जाओगी, उसकी ओर से पीठ फेर लोगी, तभी वह तुम्हारे पीछे-पीछे लौटने लगेगी। यही दशा कामनाओं की है। जब तक तुम कामनाओं के पीछे भागती जाओगी, तब तक कामनाएँ और-और आगे बढ़ती जाएँगी। तुम उन्हें कभी पकड़ न सकोगी। उन्हें तृप्त करने का उपाय एक ही है कि तुम उनकी ओर से विमुख हो जाओ। उनकी तरफ से पीठ फेर लो। बस, उसी समय कामनाएँ तुम्हारे बस में हो जाएँगी। अतएव यदि तुम तृप्ति चाहती हो तो अतृप्ति बढ़ाने का काम न करो। यदि जीवन चाहती हो तो विष का पान न करो। अमृत पीना हो तो सांप से बचो।

कल्याण का यही एक मात्र उपाय है, सुख का बस यही एक कारण है, हित का एक ही यह साधन है, और वही मैं तुमसे कह रहा हूँ। जरा

अन्तरंग को स्वच्छ करके सोचो। मोह रूपी पिशाच से छुटकारा पाओ। दुनिया की ओर से अपनी दृष्टि हटाओ नेत्रों को आत्मा की ओर ले जाओ। स्वानुभव करो अपने को निहारो। आत्मा में स्वभाव से रहे हुए आनन्द को पहचानो। वह आनन्द अनिर्वचनीय है। शब्दों में उसे पूर्ण रूप से व्यक्त करने की शक्ति नहीं है। वह आनन्द असीम है-उसका कहीं अन्त नहीं है, उसमें दुःख लेश मात्र भी मिश्रित नहीं हैं। वह स्वाधीन है। इन्द्रियों या भोगोपभोग की सामग्री की उसे आवश्यकता नहीं है, जिससे कि भोगोपभोग की सामग्री कह उपस्थिति में वह प्रकट हो जाय और उस सामग्री का विनाश होने पर सुख का भी विनाश हो जाय। इसी कारण आत्मिक आनन्द अनन्त है। उसका कभी क्षय नहीं होता। अतएव ऐसे परिपूर्ण और परमोत्कृष्ट सुख की प्राप्ति के लिए प्रयत्न क्यों नहीं करना चाहिए? मैं उसी सुख की खोज में जा रहा हूँ। तुम्हारा कोई भी प्रयत्न अब सफल न हो सकेगा।

स्त्रियाँ कहने लगीं- "प्राणनाथ! आपका शरीर अत्यन्त सुकुमार है और संयम की साधना बडी कठोर है। आपके दांत मोम के समान हैं और संयम लोहे के चने के समान है। आपके लिए यह चने चबाना सम्भव नहीं है। मक्खन के समान आपका कोमल शरीर है। इस शरीर से आप परीषहों और उपसर्गों को किस प्रकार सह सकेंगे? यहाँ आपके लिए फूलों की सेज प्रस्तुत रहती है, वहाँ आपको कंकरीली जमीन पर सोना पड़ेगा। ग्रीष्म ऋतु में यहाँ आप खसखस की टाट में भी बेचैन रहते हैं तब वहाँ कड़ी धूप और आग की लपट के समान उष्ण लू में किस प्रकार विहार करेंगे? वह विहार भी किसी सवारी पर बैठकर नहीं वरन् पैदल चल कर करना होगा। पैदल चलना भी बिना जूतों का, बिना छतरी का और धीरे-धीरे। क्या आप यह सब बर्दाश्त कर लेंगे? सर्दी के दिनों में यहाँ रूईदार रजाई और उत्तम शाल-दुशाले का उपयोग करते हैं, वहाँ मैले-कुचैले चादर ही काम में लाने होंगे और वह भी अधिक से अधिक तीन चादर रख पाएँगे। यहाँ सुंदर महलों में आप निवास करते हैं, वहाँ टूटी-फूटी झोपड़ी मिलेगी और कभी वह भी नहीं मिलेगी तो पेड़ के नीचे ही रात बितानी पड़ेगी। यहाँ शरीर में लगाने के लिए सुगन्धयुक्त चन्दन का आप उपयोग करते हैं वहाँ कभी स्नान भी नहीं कर पाएँगे। शरीर मैल और पसीने से दुर्गन्ध मारने लगेगा। यहाँ सुवर्णमय पात्रों

में भोजन करते हैं, वहाँ तूम्बी, लकड़ी या मिट्टी के पात्र काम में लाने पड़ेंगे। यहाँ आपके इशारों पर नाचने वाले सैकड़ों दास हैं, वहाँ आपको बड़े साधुओं की सेवा करनी पड़ेगी।

इन सब कष्टों के सिवाय और भी सैकड़ों कष्ट साधु अवस्था में भुगतने पड़ेंगे। यहाँ आप स्वतंत्र होकर रह सकते हैं वहाँ गुरु महाराज की आज्ञा के आधीन होकर रहना पड़ेगा। यहाँ मनमाने भोजन मिलते हैं वहाँ बचा-खुचा, रूखा-सूखा भोजन मिलेगा और वह भी भिक्षा माँग कर लाना पड़ेगा। अनेक घरों में भोजन के लिए भटकना पड़ेगा। सब प्रकार का भोजन स्वाद की अपेक्षा किए बिना ही खाना होगा।

प्राणनाथ! यह न समझिये कि दो-चार या पाँच सात वर्ष में ही इन सब कष्टों से आप मुक्त हो जाएंगे। यह कष्ट तो जीवन भर भुगतने पड़ेंगे। फिर इच्छा न होते हुए, मन में पश्चात्ताप करते हुए भी इन विपत्तियों को सहना होगा। एक बार दीक्षा ग्रहण कर फिर बाजी हाथ से चली जाती है। बाद में अपनी इच्छा कुछ भी काम नहीं आ सकती। अतएव अगली-पिछली खूब सोच लीजिए। अभी सोचा हुआ काम आ सकता है। बिना सोच-विचार किए, भावुकता के वश होकर उतावला में कोई कदम बढ़ा देना उचित नहीं है। जो लोग आवेश में आकर सहसा कोई काम कर बैठते हैं, जग-हंसाई के पात्र होते है।

नाथ! आपके ऊपर हमारा हार्दिक स्नेह है। इस स्नेह से प्रेरित होकर ही आपकी भलाई की बात कहने की धृष्टता की है। आशा है आप हमारी धृष्टता को क्षमा करेंगे और इस नीति का अनुसरण करेंगे कि-**बालादपि हितं ग्राह्मम्** अर्थात् यदि नादान बालक भी कोई हित की बात कहे तो बालक समझकर उसकी बात की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। उसकी बात को उचित और हितकारी समझ कर ग्रहण कर लेना चाहिए। कृपाकर आप हमारी प्रार्थना स्वीकार करें, दीक्षा लेनी हो तो भले ही लें, पर थोड़े दिनों तक इन सब बातों पर भली-भांति विचार कर लें। क्योंकि **अविचारः परमापदां पदम्** अर्थात् अविचार अनेक आपत्तियों का स्थान है। बिना विचारे किया हुआ काम सफल नहीं होता और पीछे पछताना पड़ता है। तीर

को हाथ से छोड़ देने के बाद उस पर कुछ भी वश नहीं रहता। अतएव पहले ही पूरा विचार करके तीर छोड़ना चाहिए। एक कवि ने कहा है:-

बिना विचारे जो करे, सो पीछे पछताय।
काम बिगारे आपनो, जग में होत हंसाय।।

(क्रमशः)

जिनवाणी के लेखकों हेतु शुभ सूचना

जिनवाणी के प्रबुद्ध लेखकों को सूचित करते हुए प्रमोद है कि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा गत वर्ष यह निश्चय किया गया था कि 1 वर्ष के अंकों में प्रकाशित विभिन्न लेखों/रचनाओं में से सर्वश्रेष्ठ को निम्न वर्गानुसार पुरस्कृत किया जाएगा। तदनुसार इस वर्ष भी यह क्रम निरन्तर रखा गया है। **गत वर्ष की श्रेष्ठ रचनाओं का निर्णय शीघ्र ही लिये जाने की संभावना है।**

1. आध्यात्मिक/नैतिकशिक्षा परक लेख	5100/-
2. शोधालेख/वैज्ञानिक लेख	5100/-
3. आगमिक/तात्त्विक/जीवन-शैली से सम्बद्ध लेख	5100/-
4. अंग्रेजी भाषा में श्रेष्ठ रचना	5100/-
5. युवा-स्तम्भ में प्रकाशित श्रेष्ठ लेख	5100/-
6. नारी-स्तम्भ में प्रकाशित श्रेष्ठ लेख	5100/-
7. बाल-स्तम्भ में प्रकाशित श्रेष्ठ रचना	5100/-
8. श्रेष्ठ कविता	3100/-
9. संवाद स्तम्भ में श्रेष्ठ समाधान	3100/-
10. श्रेष्ठ प्रेरक-प्रसंग/क्षणिकाएँ/विचार	2100/-

उपर्युक्त पुरस्कारों की घोषणा उत्कृष्ट रचनाधर्मिता के संवर्धन एवं जिनवाणी के पाठकों हेतु प्रेरणाप्रद नूतन पाठ्यसामग्री उपलब्ध कराने की दृष्टि से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के **अध्यक्ष श्री पी.एस. सुराणा-चेन्नई** की सहमति से की जा रही है। लेखकों की रचनाएँ मौलिक, स्पष्ट, प्रभावोत्पादक एवं पाठकों को दिशाबोध कराने वाली होनी चाहिए।

डॉ. धर्मचन्द जैन — सम्पादक

श्री प्रेमचन्द जैन — मंत्री

सिद्धान्तों से नहीं हैं हटना

श्री जिनेन्द्र कुमार जैन

(तर्ज : यदि चाहो कष्टो से मुक्ति......)

व्रत-नियम हम सबको प्यारे, पालें श्रावक और अणगार।
सिद्धान्तों से नहीं है हटना, प्रण लेते हैं मिलकर आज ।।टेर ।।
नहीं पालते जो नियम वो, धूर्त बड़े उनका अज्ञान।
अहम् भावना के वश होकर, बढ़ा रहे हैं अपना मान।
पर इस मान को ठेस लगेगी, पड़ेगी जब कर्मों की मार ।।1 ।।
साथ समय के बदल रहे हैं, रचते नियम नित स्वज्ञान।
पालते नहीं 'जिन' सिद्धान्तों को, निज प्रमाद स्वार्थ हठ जान।
नहीं बोध से बोध जो पायें, भटकें भूलें पथ जिनसार ।।2 ।।
साधन है वहाँ कहाँ साधना, पुद्गल सुख में सुख मत मान।
सच्चा सुख पाना चाहे तो, तज दे आलस नियम जान।
नहीं नियम पाले तो बंदे!, एक दिन होगी निश्चय हार ।।3 ।।
बात बिगड़ जब जायेगी तो, नहीं आयेगा कुछ भी काम।
सिद्धान्तों की बलि चढ़ेगी, छोड़े नहीं जो तू अभिमान।
यदि बचानी जिनवर वाणी, सद्बुद्धि से हठ को मार ।।4 ।।
बातें है सिद्धान्त की गहरी, न तू इनको हल्का जान।
कई जीव तिर गये इन्हीं से, और तिरेंगे आगे मान।
देख जीवनी उन जीवों की, अपने जीवन को तू तार ।।5 ।।
अंबड मुनि के 500 शिष्य, नियम पाल गँवाई जान।
सीता मय्या शील बचाई, प्राणों से भी बढ़कर मान।
नहीं प्यारा नियम स्व तोड़ना, विजय पाई नहीं मानी हार ।।6 ।।
एक-एक से लगे सुहाने, छोटे नियम भी हैं महान्।
कह नहीं सकते लाभ को मुख से, बड़े पाले जो जिन सिद्धान्त।
देव, गुरु और धर्म की मानो, मधुर बड़ा जिनवाणी सार ।।7 ।।
आओ करें करम अब ऐसा, निर्मल दृष्टि हो सद्ज्ञान।
सिद्ध होंगे तब सारे मनोरथ, सिद्धान्तों संग हो निज ज्ञान।
आन रहेगी सिद्धान्तों की, बदल जायेगी समय की धार ।।8 ।।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, जयपुर

पूज्य कुशलगणी की जय

।। श्री महावीराय नमः ।।

।। जय गुरू हस्ती ।।

श्री कुशलरत्न गजेन्द्रगणिभ्यो नमः

परमश्रद्धेय जैनाचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. के सुशिष्य

आचार्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्रजी म. सा. एवं उपाध्याय श्री मानचन्द्रजी म. सा. की जय

श्री श्वे. स्था. जैन चतुर्विध संघ के हितार्थ प्रमुख मुनियों द्वारा स्वीकृत

पाक्षिक पत्र विक्रम सम्वत् २०६६

वीर सम्वत् २५३५-३६ (निर्णय सागर पंचाग से सम्पादित) सन् २००९-२०१०

क्र. सं.	मास-पक्ष	तिथिवार	पक्खी दिनांक	घड़ी पल	क्षय तिथि	वृद्धि तिथि	रोहिणी नक्षत्र	पुष्य नक्षत्र
१	चैत्र सुदि	१५ गुरू	९.४.२००९	३५-००	९	-	५ मंगल	१० शनि
२	वैशाख वदि	१४ शुक्र	२४.४.२००९	११-३७	-	८	-	-
३	वैशाख सुदि	१४ शुक्र	८.५.२००९	७-१७	२	-	४ मंगल	७ शुक्र
४	ज्येष्ठ वदि	१४ शनि	२३.५.२००९	३७-०५	-	-	-	-
५	ज्येष्ठ सुदि	१५ रवि	७.६.२००९	४४-४०	४	-	१ सोम	५ गुरू
६	आषाढ़ वदि	३० सोम	२२.६.२००९	४८-०५	१४	३	१३ रवि	-
७	आषाढ़ सुदि	१४ सोम	६.७.२००९	१६-०७	७	११	-	३ गुरू
८	श्रावण वदि	१४ मंगल	२१.७.२००९	१४-२७	-	-	१२ रवि	३०बुध
९	श्रावण सुदि	प्र.१५ बुध	५.८.२००९	६०-००	१	१५	-	-
१०	भाद्रपद वदि	१४ बुध	१९.८.[illegible]	[illegible]-४५	११	-	९ शनि	१४बुध

विशेष विवरण

-आयंबिल ओली प्रारम्भ चैत्र सुदि ६ बुधवार १.४.२००९।

-भगवान महावीर जन्म कल्याणक चैत्र सुदि १३ मंगलवार ७.४.२००९।

-आयंबिल ओली पूर्ण चैत्र सुदि १५ गुरुवार ९.४.२००९।

-अक्षय तृतीया वैशाख सुदि ३ सोमवार २७.४.२००९।

-आचार्य भगवन्त पूज्य गुरुदेव १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. की १८वीं पुण्य तिथि वैशाख सुदि ८ शनिवार २.५.२००९ ।

-भगवान महावीर केवल कल्याणक वैशाख सुदि १० सोमवार ४.५.२००९ ।

-संघ स्थापना दिवस वैशाख सुदि ११ मंगलवार ५.५.२००९ ।

-आचार्य प्रवर १००८ श्री हीराचन्द्रजी म. सा. का १८वां आचार्य पद दिवस ज्येष्ठ वदि ५ गुरुवार ता. १४.५.२००९ ।

-परम्परा के मूल पुरुष पूज्य श्री कुशल चन्द्रजी म. सा. की २२६वीं पुण्य तिथि ज्येष्ठ वदि ६ शुक्रवार दि. १५.५.२००९ ।

-क्रियोद्धारक पूज्य आचार्य श्रीरतन चन्द जी म. सा. की १६४वीं पुण्य तिथि ज्येष्ठ सुदि १४ शनिवार ६.६.२००९ ।

-आर्द्रा नक्षत्र प्रारम्भः आषाढ़ वदि १३/१४ रविवार [illegible] इसके पश्चात गाज-बीज होने पर [illegible] की असज्झाय [illegible] हीं रहेगी

८	श्रावण सुदि	प्र.१५ बुध	५.८.२००६	६०-००	१	१५	-	-
१०	भाद्रपद वदि	१४ बुध	१६.८.२००६	[illegible]-४५	११	-	६ शनि	१४बुध
११	भाद्रपद सुदि	१४ गुरू	३.६.२००६	३३-५२	४	६	-	-
१२	आश्विन वदि	३० शुक्र	१८.६.२००६	४४-२५	१३	-	७ शुक्र	११मंगल
१३	आश्विन सुदि	१४ शनि	३.१०.२००६	११-५७	-	११	-	-
१४	कार्तिक वदि	३० रवि	१८.१०.२००६	१०-५०	६	-	५ शुक्र	६ सोम
१५	कार्तिक सुदि	१५ सोम	२.११.२००६	४४-४०	-	-	-	-
१६	मार्गशीर्ष वदि	३० सोम	१६.११.२००६	४४-१५	६	-	३ गुरू	७ सोम
१७	मार्गशीर्ष सुदि	१४ मंगल	१.१२.२००६	२०-३०	-	५	१५ बुध	-
१८	पौष वदि	३० बुध	१६.१२.२००६	२५-२२	३	-	-	५ रवि
१९	पौष सुदि	१५ गुरू	३१.१२.२००६	४३-०२	१३	६	१४ बुध	-
२०	माघ वदि	१४ गुरू	१४.१.२०१०	६-४०	६	१३	-	२ शनि
२१	माघ सुदि	१४ शुक्र	२६.१.२०१०	२०-१०	-	-	११ मंगल	१५ शनि
२२	फाल्गुन वदि	प्र.३० शनि	१३.२.२०१०	६०-००	२	३०	-	-
२३	फाल्गुन सुदि	१५ रवि	२८.२.२०१०	३७-३२	१३	-	८ सोम	१२ शुक्र
२४	चैत्र वदि	३० सोम	१५.३.२०१०	४६-०७	-	-	-	-

सुदि १४ शनिवार ६.६.२००६ ।

-आर्द्रा नक्षत्र प्रारम्भ: आषाढ़ वदि १३/१४ रविद[illegible]
इसके पश्चात् गाज-बीज होने पर सूत्र की असज्झाय नहीं रहेगी

-चातुर्मास प्रारम्भ (चातुमासी पक्खी) आषाढ सुदि १४ सोमवार ६.७.२८

-पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म. सा. की ८३वीं पुण्यतिथि श्रावण वदि ३० बुधवार २२.७.२००६ ।

-पर्युषण महापर्व प्रारंभ भाद्रपद वदि १२ सोमवार १७.८.२००६ ।

-संवत्सरी महापर्व भाद्रपद सुदि ५ सोमवार २४.८.२००६ ।

-आयंबिल ओली प्रारम्भ, आसोज सुदि ८ शनिवार २६.६.२००६ ।

-पूज्य आचार्य श्री भूधरजी म. सा. की पुण्य तिथि आसोज सुदि १० सोमवार २८.६.२००६ ।

-आयंबिल ओली पूर्ण आसोज सुदि १५ रविवार ४.१०.२००६ ।

-भगवान महावीर निर्वाण कल्याणक कार्तिक वदि ३० रविवार १८.१०.२००६ ।

-वीर संवत् २५३६ प्रारम्भ एवं गौतम प्रतिपदा कार्तिक सुदि १ सोमवार १६.१०.२००६ ।

-ज्ञान पंचमी एवं स्वाति नक्षत्र प्रारम्भ कार्तिक सुदि ५ शुक्रवार २३.१०.२००६
इसके पश्चात गाजबीज होने पर सूत्र की असज्झाय रहेगी।

-आचार्य प्रवर १००८ श्री हीराचन्द्रजी म. सा. का ४७वां दीक्षा दिवस कार्तिक सुदि ६ शनिवार २४.१०.२००६ ।

-चातुर्मासिक पक्खी (चातुर्मास पूर्ण) एवं वीर लोकाशाह जयन्ती कार्तिक सुदि १५ सोमवार २.११.२००६ ।

-मौन एकादशी मार्गशीर्ष सुदि ११ शनिवार २८.११.२००६ ।

-भगवान पार्श्वनाथ जन्म कल्याणक पौष वदि १० शुक्रवार ११.१२.२००६ ।

-फाल्गुनी चातुर्मासी पर्व फाल्गुन सुदि १५ रविवार २८.२.२०१० ।

-भगवान आदिनाथ जन्म कल्याणक एवं आचार्य प्रवर १००८ श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का ७२ वां जन्म दिवस चैत्र वदि ८ सोमवार ८.३.२०१० ।

जीने का अधिकार सभी को

श्री अशोक कुमार बोहरा

बना परीक्षा जीवन सबका, मानवता को हम सब पालें।
जीने का अधिकार सभी का, सदाचार और शिष्टता धारें ।।
जहाँ प्रवेश है भौतिकता का, नैतिक गुण प्रस्थान करेंगे।
शाश्वत जीवन भोग नहीं है, त्याग-योग-वैराग वरेंगे ।।
जीवन है शृंगार हमारा, साथी यदि प्रकृति को मानें।
अनेकता है सारगर्भित, प्रवृत्ति से निवृत्ति जानें।
ए मेरे जीवन के पक्षी! बढ़ता चल हिम्मत न हार।
साहस में भविष्य अंकुरित, मत अतीत की ओर निहार ।।
बनी भावना यदि कोमल, वंदना अनुभूति के संग।
व्यवहार की मधुरता से ही, मरू भूमि में प्रवाहित गंग।
जीवन हमारा सीधा-सादा, गंगाजल सा पावन हो।
भोला-भाला हरा-भरा नित, मन-मोहक वह सावन हो ।।
जीवन केवल पूजा पाठ नहीं, साधना की कर्मभूमि है।
हो कर्तव्यों का यदि पालन तो, आराधना की धर्मभूमि है ।।
जीवन की हर श्वास-श्वास में, प्रेमपूर्वक अन्दर झाँको।
धर्म-कर्म से परिचित होकर, अपने इष्ट की ओर ताको।
ज्ञान-दर्शन-चारित्र को जिसने, गहनता से समझा है।
कर्म-बन्धन काटे उसने, भवसागर से सुलझा है ।।

-10, प्रतापनगर, दादाबाड़ी, कोटा (राज.)

शरीर में रोग के अनुकूल दवा बनाने की क्षमता होती है और यदि उन क्षमताओं को बिना किसी बाह्य दवा और आलम्बन के विकसित कर दिया जाता है तो उपचार अधिक प्रभावशाली, स्थायी एवं भविष्य में पड़ने वाले दुष्प्रभावों से रहित होता है। *-'आरोग्य आपका' से साभार*

Tattva bodha

IRYAPATHIKA SŪTRA

Dr. Priyadarshana Jain

TEXT	TRANSLATION
Icchāmi	- I wish to
Padikkamiu	- Do *Pratikramana*
Iriyāvahiyāe	- Of the daily movements
Virāhaṇāe	- Of violence
Gamaṇāgamaṇe	- While moving here and there
Pāṇakkamaṇe	- Stamped any creature
Bīyakkamaṇe	- Destroyed any seed
Hariyakkamaṇe	- Any plant
Osā	- Dew
Uttiṅga	- Ants or Anthills
Paṇaga	- Mosses, Lichens
Daga	- Water
Maṭṭi	- Clay, Sand
Makkadā Santāṇā	- Cobwebs
Saṅkamaṇe	- Crushed
Jemejīvā	- Any life
Virāhiyā	- Hurt
Egindiyā	- One-sensed beings
Beindiyā	- Two-sensed beings
Teindiyā	- Three-sensed beings
Caurindiyā	- Four-sensed beings
Pañcindiyā	- Five-sensed beings.
Abhihayā	- Attacked them
Vattiyā	- Covered them with sand etc.
Lesiyā	- Rubbed them
Sanghaiyā	- Collected them
Sanghattiyā	- Touched them
Pariyāviyā	- Injured them
Kilāmiyā	- Made them unconscious
Uddaviyā	- Made them fearful

Thāṇāo	- From one place
Thāṇaṁ	- To another
Sāṅkāmiya	- Kept them
Jīviyāo	- From life to
Vavaroviyā	- Lifeless Position
Tassa Micchāmi dukkadam	- May that sin be fruitless.

Meaning

I wish to do the ritual of ***Pratikramana*** i.e. give up the sinful activities and expiate for the same and remain steady in my self. I firstly do the ***Pratikramana*** for having hurt or injured any creature while walking, moving from one place to another, etc, if I have stamped any creature, seed, plant, dew, insects like ants and spiders, grass or weeds, be it one, two, three, four or five-sensed, I expiate for the ten ways by which I might have committed violence towards them viz.1. knocking, 2. squashing, 3.crushing, 4. hunting by collecting, 5. hunting by touch, 6. torturing, 7. hunting by stopping its motion, 8. affrighted, 9. removing from one place to another, 10. depriving of life.

Explanation

Man is a social animal and is always on the move. His mind, body and speech are never steady and are always looking out for something or the other in the world. Through his intellect and will - power he has climbed the peaks of mountains and dived deep into the seas, and has traveled in space. The entire world has become a global village due to the movement of man. From birth to death he travels physically, verbally and mentally. An ascetic too is always on the move. In other words, living is not possible without moving, and so it is important to know the art of moving. ***Jainism*** declares that there is life in earth, fire, water, air and plants, besides we have the different kinds of mobile beings. Through this lesson we are informed of the subtle violence

that can possibly take place by our movements and are cautioned to take care of our day to day movements.

A ***Jaina*** aspirant pledges to take utmost care in his day to day activities and movements so as not to harm the creatures. He has to exert judiciously and wisely at every step. The environmental degradation that is taking place at an alarming rate is due to the activities of man and man has to check them sooner or later, so say the environmental scientists of today. Man needs to think and exert rationally to save the earth of further degradation. If one walks, sits, sleeps, eats, speaks and exerts rationally, he does not bind inauspicious ***karmas*** and at the same time safeguards the interests of the environment.

Only when a person becomes aware of his day-to-day activities and movements, he can save himself from karmic bondage and transmigration. The spiritually-realized and brave souls alone will expiate for their sins and faulty movements and confess them to the ***Guru*** and accept Prayascitta i.e. expiation. The ten ways by which the living beings are injured are revealed in this ***Sūtra***. One may attack, cover, rub, collect, touch, injure, make them unconscious, fearful, pick and place elsewhere and kill the meek creatures.

There are infinite number of ***jivas*** i.e. souls caught in the web of transmigration, and the scriptures reveal that there are 8.4 million (84 lakhs) life-forms i.e. types of ***jivas***, of which science has discovered approximately 3 million life-forms. The ***jivas*** are uncreated and indestructible essentially, but from the point of view of the body they transmigrate i.e. they are subject to birth and death in accordance with their ***karmas***. Although they do not desire them, they cannot escape the fruits of their deeds. The scriptures reveal that all living beings desire to live, none wants to die, hence ***Ahimsa*** is extolled as the supreme religion and the ***Jains*** have been

forerunners in safeguarding the rights of all living beings be it micro or macro. The ***ācārānga Sūtra*** says that whom you desire to kill, rule, abuse and injure is your own self. What you do not desire for yourself, do not desire the same for others- this is the essence of all learning. Wise is he who doesn't kill at any cost and looks upon all creatures as his own self.

Through this lesson the aspirant begs pardon for the carelessness in his movements and for the violence he has caused to any creature, knowing pretty well that the fruit of non-violence is happiness and well being and that of violence is pain, grief and misery.

-Lecturer, Dept. of Jainology, University of Madras, Chennai

चिन्तन-कण

(तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. के दीक्षा के 25 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में अभिलाषा अजय हीरावत-मुम्बई द्वारा मुनि श्री के प्रवचनों से संकलित एवं प्रेषित चिन्तन-कण)

1. व्यवहार में अरिहन्त देव, साधु गुरु, दयामय धर्म है,
   निश्चय में आत्मा देव, ज्ञान गुरु, उपयोग धर्म है।
2. अनित्य को देखकर, अनित्य को नित्य करने का प्रयास आर्त्तध्यान है,
   अनित्य को देखकर, अनित्य को अनित्य समझने का प्रयास धर्म ध्यान है।
3. वृक्ष जब सफल (फल सहित) होता है तब नम्र होता है,
   व्यक्ति जब नम्र होता है तब सफल होता है।
4. इच्छा रहते हुए प्राण समाप्त हो जाएँ - मृत्यु,
   प्राण रहते हुए इच्छा समाप्त हो जाए - मुक्ति।
5. किसी से अपेक्षा नहीं, किसी की उपेक्षा नहीं,
   किसी का दोष नहीं, किसी पर द्वेष नहीं।
6. संकल्प अपूर्ति के दुःख को सहर्ष सहन करना तप है,
   संकल्पपूर्ति के सुख में आबद्ध नहीं होना त्याग है।

उपन्यास(1)

सुबह की धूप

श्री गणेशमुनि जी शास्त्री

श्री गणेशमुनि शास्त्री का यह उपन्यास मानव की मनोवैज्ञानिक वृत्तियों, सामाजिक रूढियों, विपन्नता-सम्पन्नता, ग्रामीण परिवेश, प्रचलित सोच आदि का यथार्थ चित्रण करता है। - **सम्पादक**

दूर किसी मिल का सायरन बजा, तब कहीं खर्राटे भर रहे किशनलाल की नींद टूटी। पलंग पर लेटे-लेटे करवटें बदलते हुए उसने देखा कि सूरज आकाश में काफी ऊपर तक चढ़ आया है। उसकी आँखें दीवार पर टंगी घड़ी पर जा पहुँची- 'बाप रे! नौ बज गये?' वह हड़बड़ाता हुआ उठा और चिल्लाता हुआ बोला- 'मोतीराम! ओ मोतीराम!'

'जी सरकार! अपने शयनकक्ष का किवाड़ खोलकर, सलाम बजाते हुए मोतीराम बोला।

'अरे सरकार के बच्चे! यह बता, तूने अब तक जगाया क्यों नहीं मुझे।'

'कैसे जगाता सरकार! रात को दो बजे तक तो आप जागते रहे हैं। फिर आज रविवार है। सोचा, मालिक को मीठी-मीठी नींद आ रही होगी। हो सकता है मीठे-मीठे सपने भी सरकार देख रहे हों। अगर सपने टूट जाते तो आप टांगे तोड़ देते और कहते- 'मोतीराम! अब भूल करके भी रविवार के दिन जल्दी मत जगाना मुझे। क्यों सरकार! झूठ तो नहीं कह रहा हूँ मैं?''

'तुझे तो कोई न कोई बात हाथ लगनी चाहिए। फिर उसी के पीछे लट्ठ लेकर पड़ जायेगा। चल, गर्म पानी गुसलखाने में रखकर आ। जल्दी कर।'

'अभी गया सरकार।' एक झटके के साथ मोतीराम पलटा और बाहर निकल गया। कुछ देर बाद किशनलाल, अपने बिस्तर से उठा और स्नान आदि करके पुनः अपने कमरे में आया, तब तक दस बज चुके थे। मोतीराम चाय का प्याला लिये खड़ा था।

'और कोई नहीं दिखाई दे रहा है। कहाँ चले गये सब के सब?' मोती के हाथ से प्याला लेते हुए किशनलाल बोला।

'मालकिन तो अभी-अभी यहीं थीं। शायद स्थानक चली गईं होंगी।'

आराम कुर्सी पर बैठते हुए किशनलाल ने चाय का प्याला खाली करके नीचे रखा ही था, तब तक 'कॉल-बैल' बज उठी। मोतीराम ने दरवाजे पर पड़ी चिक उठा कर आगन्तुक से पूछा-'आप?'

'मेरा नाम बंशीलाल है। तुम्हारे मालिक हों, तो उनसे कहना कि गांव से बंशी काका आये हैं।'

आगन्तुक का कथन सुनकर, किशनलाल स्वयं उठ कर दरवाजे तक आया और बोला- 'आओ बंशी काका। बाहर ही क्यों खड़े रह गये? यह तुम्हारा ही तो घर है।'

'अरे बेटे! गांवों में यह पूछापाछी की प्रथा पहिले नहीं थी। पर अब, वहाँ भी पूछ-पूछ करके घरों में प्रवेश करना पड़ता है। हमारे जमाने में तो घर का मुखिया दरवाजे पर ही बैठा मिलता था। आज वे बड़े-बड़े दरवाजे कहाँ रहे? सबके यहाँ कमरे हो गये हैं। तुमने भी मकान बनवाया, एकदम महल जैसा बनवा लिया है।' इधर-उधर देखता हुआ बंशीलाल बोला।

'भगवान की कृपा है काका! गाँव के लोग तो आनन्द में हैं?'

'आनन्द, कहने भर का है वहाँ। सच्चा सुख और आनन्द तो तुम उठा रहे हो बेटे! आज लड़ाई-झगड़े, ईर्ष्या-द्वेष के गढ़ बन गये हैं गाँव। तुमने अच्छा किया, जो समय रहते यहाँ आ गये। सचमुच, यहाँ तो तुम्हारे ठाट ही कुछ और हो गये हैं। एक बात पूछूँ किशनलाल!' कुछ झिझकते हुए कहा बंशीलाल ने।

'एक बात ही क्यों? जितनी इच्छा हो, उतनी बातें पूछो काका।'

'आखिर यह सब कैसे, क्या हो गया? लक्ष्मी ऊपर से टपक पड़ी थी क्या?'

'अरे काका! सब बड़े-बूढ़ों का आशीर्वाद है। तुमसे भला क्या छुपाना, तुम जानते हो काका। गाँव के ठाकुर ने जबर्दस्ती हमारे खेत पर कब्जा कर लिया था। मैं बहुतेरा चीखा, चिल्लाया, लेकिन किसी ने भी मेरा साथ नहीं दिया था। उसी रात मैंने प्रण कर लिया था कि इस गाँव में अब अन्न-जल भी नहीं लूँगा। बस, सवेरा होते ही भूखा-प्यासा, चन्दू को गोद में उठाये शहर की ओर आ गया।

"क्या कहा, गाँव से भूखे निकले थे ?"

"क्या करता, कोई उपाय भी तो नहीं था। उस शाम नीलमणि से दस रुपये मांगे थे, इन्कार कर गया था।" वह बोला-"अभी हैं ही नहीं।" बस, निराश हो

गया। सोचा- "अब किसी के आगे हाथ नहीं पसारूँगा।' जो कुछ हम उठाकर चल सकते थे, उतना ही ले कर सवेरे-सवेरे चल दिया था। कुछ दिन यहाँ ठेला चलाया। फिर भगवान ने हमारे परिश्रम का प्रसाद प्रदान किया, तो कुछ दिनों बाद एक छोटी-सी दुकान ले ली थी। उसी समय एक मुसलमान भाई से मित्रता हो गई, जो अच्छा व्यापारी था। आजादी मिलने के समय भारत-पाकिस्तान का बँटवारा हो गया। अपनी बड़ी दुकान और मकान, कौड़ियों के भाव मुझे देकर वह पाकिस्तान चला गया। बस, तब से आनन्द ही आनन्द है। जिसे तुम चन्दू कहते थे काका! उसके बाद दो बच्चे और एक बच्ची, यहाँ हुए।'

"परिवार में और व्यापार में दोनों तरफ प्रगति हुई है तुम्हारी!" मुस्कुराते हुए बंशीलाल ने कहा।"

"हाँ, यही समझो काका! भगवान् की कृपा से सब बच्चे भी पढ़ने में अच्छे हैं। बड़ा बच्चा-विश्वास यानी चन्दू, इंग्लैण्ड में डॉक्टरी पढ़ रहा है। इसी महीने उसकी परीक्षा पूरी हो जाएगी, जल्दी ही वापिस आने वाला है। उससे छोटा चन्दन है। वह इंजीनियरिंग पढ़ रहा है। तीसरा है- दीपक। सच पूछो काका! घर में आज जो रौनक तुम देख रहे हो, वह दीपक के जन्म के बाद से ही आई है। आरती बिटिया, सबसे छोटी है। है तो पराये घर की अमानत! लेकिन मैं बच्ची और बच्चों में फर्क नहीं समझता। वह भी डॉक्टरी पढ़ने के लिये कह रही है। भगवान् ने चाहा तो उसकी भी इच्छा पूरी हो जायेगी।"

'क्या किस्मत पाई है किशनलाल तूने। सच, जब सुख आता है तो चारों तरफ से आता है। फिर तेरे तो तीन रास्ते आने के हैं और जाने के लिए सिर्फ एक ही रास्ता है। लक्ष्मी की बरसात होगी बेटे! थोड़ा मजबूत बने रहना।'

'अब तुम्हें क्या बतलाऊँ काका! अक्ल ही काम नहीं करती। लड़का योग्य हुआ तो आगरा में मुँहमांगे दाम मिलते हैं। जो बड़ा लड़का है- विश्वास, उसके लिए कोई पचास रिश्ते आ चुके होंगे। एक मेरा दोस्त है धनपतराय। कह रहा है- 'किशन भाई! मेरी बेटी को बहू बना ले और बम्बई की या दिल्ली की एक मिल दहेज में ले ले।' मैं अभी तक कुछ सोच नहीं पा रहा हूँ।'

'वाह! कमाल है।' आश्चर्य से कहा बन्शीलाल ने।

'उनसे छोटे के लिये भी पचास लाख तक देने वाले आ चुके हैं।'

'तब तुम देख क्या रहे हो बेटे! जल्दी कर लो। मौका निकल गया तो फिर

पछताना पड़ेगा।'

'मैं तो तैयार हूँ। मगर, शहरों में लड़की को लड़का स्वयं पसन्द करता है। विश्वास को लिख भी चुका हूँ, वह कहता है-'आप जल्दी मत करो। मैं पहिले लड़की को देखूँगा। अब काका! शादी तो करनी ही है। सगाई और शादी, दोनों साथ-साथ हो जायेंगे। इस शादी में तुम आना भूल मत जाना काका।'

'तुम बुलाओ और मैं नहीं आऊँ, यह कैसे हो सकता है बेटे।'

'अरे! आओ आओ शान्ति!' अपनी पत्नी को कमरे में प्रवेश करते देखकर किशनलाल ने मुस्करा कर कहा- 'इनको पहिचाना तुमने?'

शान्ति ने कुछ क्षण गौर से बन्शीलाल को देखा। फिर अपने सिर के पल्लू को ठीक ढंग से ओढती हुई बोली-'आप बन्शी काका ही हैं न?'

'खूब पहिचाना! मैं तो सोच रहा था भूल गई होगी।'

'आपको कैसे भूल सकती हूँ काका! काकी मजे में है?'

'तुम्हें बहुत याद करती रही। बड़ा बेटा बिरजु, एक दुर्घटना में मारा गया। बस, उसी का गम उसे बैठ गया। पाँच वर्ष पहिले वह भी हमें छोड़ कर चली गई।'

तो काकी नहीं रही काका! और तुमने मुझे सूचित भी नहीं किया काका!

'क्या सूचना देता किशन! यह तो बहू ने पूछ लिया, इसलिए बताना पड़ा।'

'माधव, बिहारी और रामू के क्या हाल है?'

कुछ मत पूछ बेटे! सब के सब कुत्तों की तरह आपस में लड़ते थे। दो बरस पहिले सबको अलग-अलग कर दिया। मेरी जो दुर्गति होनी थी, वह हो ही रही है बेटे। क्या बताऊँ, कहते हुए शर्म आती है।'

'तुम किसके पास रह रहे हो?'

'छोटे बेटे रामू के पास रहता हूँ। बेटा तो ठीक है। मगर बहू........, हे भगवान! दिन भर चिक-चिक करती रहती है सोचता हूँ, अब अकेला ही रहूँ। एक नौकर रख लूँगा। खाना बना दिया करेगा और ऊपरी सेवा भी कर दिया करेगा।'

'थोड़ी-बहुत पूँजी तो अपने पास रक्खी होगी या सारी की सारी बेटों को बाँट दी।'

'मेरे नाम पर बीस हजार जमा हैं बैंक में। तीनों बेटे बहुत छटपटाये इन

रुपयों के लिये। मगर, भगवान ने मुझे अक्ल दे दी थी। अब मुझे किसी की परवाह भी नहीं है। मरते समय जो बचेगा, उसे अनाथालय को दे दूँगा। मगर उसमें से एक फूटी कौड़ी भी बेटों को देने वाला नहीं हूँ।'

'बहुत कठोर हो गये हो काका!'

'हाँ, परिस्थितियों ने कठोर बना दिया है, क्या करूँ। कोई औलाद ही नहीं होती तो अच्छा रहता।'

'क्या जमाना आ गया है काका!' -शान्ति ने कहा।

'क्या करूँ बहू! एक भी तो योग्य नहीं निकला तीन में से, सब वही के वही हैं। मुझे भी अक्ल कहाँ आई। गाँव में पढ़ाई के बाद वहीं खेती-बाड़ी में लगा दिया। बुजुर्गों ने सोना उगलने वाली जमीन दी थी। इसलिए कोई परेशानी नहीं आई। आदमी, जब घर छोड़कर बाहर निकलता है, तभी कुछ सीख पाता है। हम तो कूप-मण्डूक ही रह गये। अच्छा हुआ जो तुम लोग समय रहते गाँव छोड़कर निकल आये।'

'भगवान् जो करता है, अच्छा ही करता है। न जमींदार से झगड़ा होता न गाँव छोड़ना पड़ता। क्या हाल है उन सबके?'

'उनकी हालत भी बदल गई है। आजादी मिलते ही उनकी जमींदारियाँ चली गईं। जो अतिरिक्त जमीन थी, वह सीलिंग में निकल गई। फिर भी खर्चों और शौक में कमी नहीं आई। दिन-रात शराब में डूबे रहे तो उसी में बह गये। फाके पड़ रहे हैं आजकल।'

'दूसरों को सताने वालों की यही दशा होती है। हमें देखो, आनन्द में हैं। आखिर मैंने रोते-रोते उन्हें शाप दिया था। आज उसका परिणाम सामने है। दीन-दुःखी की आह बुरी होती है काका! गरीब के दिल को तोड़ना, भगवान् के मन्दिर को तोड़ने जैसा होता है।' शान्ति ने अपने मन का गुबार निकालते हुए कहा।

'सच बात है बहू!' *(क्रमशः)*

-श्री अमर जैन साहित्य संस्थान, गणेश विहार,
सेक्टर 11, हिरणमगरी, उदयपुर (राज.)

नोट :- 'छाया' उपन्यास का सम्पादकीय कारणों से आगे प्रकाशन स्थगित किया गया है।

नारी-स्तम्भ

आओ घर को स्वर्ग बनायें

श्रीमती रतन चोरडिया

नारी घर की नींव है, रीढ की हड्डी है। घर की लक्ष्मी है। देहली का दीपक है। घर को स्वर्ग बनाने वाली देवी है। बच्चों को सुसंस्कार देने वाली माँ है। जिसकी छत्रछाया में परिवार पलते हैं, बढते हैं। यदि एक नारी संस्कारी होती है तो पूरा परिवार संस्कारी होता है। यदि एक परिवार संस्कारी होता है तो पीढी दर पीढी संस्कारित होती है। पूरे घर परिवार को सुसंस्कार देने वाली तथा एक डोर में बांधकर रखने वाली धुरी नारी ही है। जिस घर में नारी जागरूक नहीं होती,उस घर को बर्बादी की राह पर बढते देर नहीं लगती। जिस घर में मर्यादाओं का पालन होता है, बड़ों का विनय होता है, प्रेम, सेवा, सहयोग,सहिष्णुता, करुणा, त्याग, समर्पण व आत्मीयता की भावना होती है वही घर स्वर्ग बनता है। किसी एक व्यक्ति से घर स्वर्ग नहीं बनता। घर को स्वर्ग बनाने के लिये परिवार के हर सदस्य में प्रेम, सेवा, विनय, विवेक, समर्पण व सहयोग का गुण होना चाहिये। हम सब यह जानते हैं कि जैसे ताली एक हाथ से नहीं बज सकती उसी प्रकार किसी एक व्यक्ति के संस्कारी होने से पूरा परिवार संस्कारी नहीं हो सकता। जिस राम को हम मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहते हैं जिनके आदर्श जीवन की बातें सुनकर आज भी हमारा मन श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है, पर क्या अकेले राम का जीवन ही आदर्शमय, संस्कारी व मर्यादित था। यदि सीता, लक्ष्मण, भरत आदि परिवार के सब सदस्य संस्कारी एवं मर्यादित नहीं होते तो क्या राम अकेले मर्यादा पुरुषोत्तम बन सकते थे? घर के हर सदस्य का सहयोग व समर्पण ही घर को स्वर्ग बनाता है। मात्र एक मंथरा ने अयोध्या के सुप्रसन्न वातावरण में विषाद की लहरें फैला दी।

ईर्ष्या एक ऐसी आग है जो पूरे परिवार के वातावरण को कलुषित व अंशात बना देती है। कारण कि जब व्यक्ति ईर्ष्या से अंधा बनता है तो उसका विवेक नष्ट हो जाता है। प्रायः यह देखा जाता है किसी की सफलता पर ऊपर से व्यक्ति हर्ष प्रकट करता है, बधाई देता है पर भीतर से जलता है। ईर्ष्या मन की

क्षुद्रता है, गुप्त पाप है, भीतर में छुपी आग है। ऐसे व्यक्ति दूसरों को प्रसन्न देखकर कूढते हैं, उसे किसी में भी प्रेम, सद्भाव व सद्गुण नहीं दिखते हैं। अतः ऐसे ईर्ष्यालु व्यक्ति जिस घर में रहते हैं वे एक दूसरे की टांगे खींचते हैं, नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हैं। वह घर कभी स्वर्ग नहीं बनता। घर को यदि स्वर्ग बनाना है तो कुछ सूत्र हमें जीवन में अपनाने होंगे। सबसे पहले हम अपने प्रति ईमानदार बनें। जो व्यवहार हम स्वयं नहीं चाहते वह किसी दूसरों के साथ न करें। हमारे व्यवहार से किसी को दुःख न हो, किसी का तिरस्कार या अपमान न हो। किसी को गिराने, नीचा दिखाने के भाव कभी मन में न आये। सुख देने से सुख मिलता है, दुःख देने से दुःख मिलता है। दुःख देने से तीन काल में भी हम सुख पा नहीं सकते, यह सूत्र सदैव स्मरण रखें।

घर को स्वर्ग बनाना है तो पूरें परिवार में प्रेम का वातावरण होना अत्यावश्यक है। बड़े वात्सल्य बरसायें तथा बच्चे विनीत व सरल हों। जहाँ बड़ों को कहना व बच्चों को सहना आता हो, जहाँ निभना व निभाना आता हो अर्थात् परिवार के सभी सदस्य एक दूसरे के स्वभाव को समझकर एडजस्ट हो जायें तो घर का वातावरण उल्लासमय बनता है। पर आजकल देखा जाता है कि एक ही छत व एक ही घर में रहते हुए भी परिवार के सदस्य के मन एक दूसरे से कोसों दूर रहते हैं। जहाँ क्लेश हो, मनमुटाव हो, दूरियाँ हों, अहंकार हो वह घर कभी स्वर्ग नहीं बन सकता है।

संयुक्त परिवार में सब सदस्य शांति व संतोष के साथ आनन्दित जीवन जीते हैं। जब सभी सदस्यों का व्यवहार प्रेम पूर्वक हों, बहुएँ, बेटे अनुकूल हों, जहाँ बडे-छोटे सभी स्नेह व सम्मान की मर्यादा निभाते हों, लड़ाई-झगड़े से दूर रहते हों, तनावग्रस्त नहीं रहते, खिंचे-खिंचे कभी नहीं रहते। सब प्रेम शांति व आनन्द से जीवन जीते हैं ऐसा घर किसी स्वर्ग व धर्मस्थान से कम नहीं होता। आज जरूरत है अपने घर को ही आपसी प्रेम व सद्भावनाओं से स्वर्ग जैसा बनाने की। हम जीवन की समस्याओं को सुलझाना चाहते हैं, पर हमारा दुर्भाग्य है कि समस्याएँ सुलझने के बजाय और अधिक उलझती जा रही हैं। आज हमारी समस्याएँ खाने-पीने या रोटी-मकान की कम, बल्कि सच्चे इन्सान बननें की अधिक है। जहाँ मन में उदारता, हृदय में प्रेम हो। जीवन में विनय विवेक की

ज्योति जलती है, सेवा, सरलता, सहयोग, सहनशीलता के गुण जीवन में खिलते हैं, वहाँ सारी समस्याएँ समाप्त हो जाती हैं। इन गुणों के अभाव में एक समस्या को दूर करने का प्रयत्न करते हैं तो चार समस्याएँ सामने खड़ी हो जाती हैं। कहते हैं अनीति का कमाया धन अपने साथ ढेर सारी विपत्तियाँ भी लेकर आता है। जिस धन में अन्याय-अनीति का ज़हर मिला हुआ है वहाँ शांति व सुख कैसे रह सकता है।

हम चाहते हैं कि घर परिवार में सब हमारे से प्यार करें, कोई नफरत व घृणा न करें, कोई हमारी उपेक्षा न करें, सर्वत्र हमारा आदर व सम्मान हो, हम जहाँ जायें प्रेम-आदर व आत्मीयता का व्यवहार होना चाहिये, पर चाहने मात्र से सब कुछ नहीं मिलता। प्रेम मांगने व चाहने से नहीं देने से मिलता है। यदि हम दूसरों से प्रेम करेंगे, सहयोग व सेवा करेंगे, मधुर बोलेंगे तो सबके हृदय में हमारा स्थान होगा, सभी हमारा आदर करेंगे, पलक पावड़े बिछायेंगे।

दीपक की एक छोटी सी लौ पूरे मंदिर को प्रकाशित कर देती है। छोटा सा मंत्र देवता के आसन को कंपायमान कर देता है, छोटी सी चिनगारी मणों घास के ढेर को जला देती है। छोटी सी मोमबत्ती पूरे घर को प्रकाशित कर देती है। छोटी सी अगरबत्ती पूरे वातावरण को सुगन्धित बना देती है। उसी प्रकार ढाई अक्षर का छोटा सा 'प्रेम' शब्द पूरे घर को मिठास से भरकर घर को स्वर्ग बना देता है।

जिस घर में बड़ों का आदर व सम्मान होता है, जहाँ बडों की आज्ञाओं एवं मर्यादाओं का पालन होता है, बडों का मान होता है वह घर स्वर्ग बनता है। जब जीवन में विनय नहीं होता तो उस घर का वातावरण अशांत व घुटन पैदा करने वाला बन जाता है। भौतिक सुख-सुविधा व ऐश्वर्य के सारे साधन मौजूद होने पर भी प्रेम व आत्मीयता के अभाव में सुख, शांति आनन्द कोसों दूर रहते हैं। वह परिवार टूट जाता है, बिखर जाता है। स्वर्ग जैसा सुन्दर घर अंहकार के कारण नरक जैसा बन जाता है। जहाँ विनय है, समर्पण है, मेरेपन का भाव है, सम्प है, आत्मीयता है वहीं स्वर्ग का सुख है। विनीत के लक्षण बताते हुए एक विचारक ने बहुत सुन्दर बात कही है-

1. जो कड़वी बात का मीठा उत्तर देता है।

2. क्रोध का प्रसंग उपस्थित होने पर भी चुप रहता है।

3. दंडनीय को दंड देते समय भी चित्त को कोमल रखता है। वही विनीत है।

जिसका हृदय सरल व पवित्र होता है वह सबका मन जीत लेता है। जो बोलता कुछ हो, और करता कुछ और हो, जो हर बात छुपाकर करना चाहता है, जिसके जीवन में दंभ और छल का साम्राज्य हो; वह घर के वातावरण को क्लेशमय बनाता है। इसके विपरीत सरल व्यक्ति हर बात को सीधी लेता है, चाहे बात उलटी ही हो। वह अपनी भूल ज्ञात होने पर जल्दी स्वीकार कर लेता है। उसमें लुकाव-छिपाव-दुराव नहीं होता। उसका हृदय स्वच्छ व कोमल होता है। ऐसे विनीत व सरल व्यक्ति जिस घर में रहते हैं, वह घर स्वर्ग बनता है।

जहाँ परिवार के सभी सदस्यों के प्रति समान व्यवहार होता है; सभी सदस्यों के प्रति मैत्री भाव, आत्मीय भाव, प्रेमभाव, समभाव, निष्पक्ष व्यवहार होता है वह घर स्वर्ग बनता है। सबके हित-चिन्तन के भाव- मैं सबको सुख दूँ, जितनी मुझसे बन सके सबको साता पहुँचाऊँ। पर आजकल देखा जाता है कि घर के सदस्यों में समान व्यवहार नहीं होता। कहीं माँ बाप, भाई-बहनों को खूब सम्मान दिया जाता है, पर जो पत्नी अपने घर-परिवार सबको छोड़कर आती है उसकी उपेक्षा, उसके साथ नौकरों से बदतर व्यवहार किया जाता है। तो कहीं पत्नी व बच्चों से बेहद प्यार तथा माँ-बाप, भाई-बहिन की उपेक्षा होती है। कहीं घर वालों का अनादर व ससुराल वालों का आदर, कहीं भाई-बहिनों की उपेक्षा व साले-सालियों का आदर- इस तरह जहाँ परिवार के सदस्यों के साथ, उनकी भूमिका के अनुसार-जिसका जैसा आदर होना चाहिये वैसा सम्मानपूर्ण व्यवहार नहीं होता, वह घर कभी स्वर्ग नहीं बन सकता। माँ की जगह माँ का व पत्नी की जगह पत्नी का आदर हो, सम्मान व प्यार हो। अपने बच्चों एवं भाई-बहनों के बच्चों के साथ बराबर का व्यवहार हो। जहाँ एक का आदर व दूसरों की उपेक्षा होती है उस घर में कलह व फूट हमेशा डेरा जमा कर रहती है, वहाँ सदैव अशांति बनी रहेगी। जहाँ प्यार आदर व सबके साथ एक जैसे सम्मान का भाव होता है, वह घर स्वर्ग बनता है।

(क्रमशः)

-चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर (राज.)

युवा स्तम्भ

निराशा, कुण्ठा और आत्महत्या से कैसे बचें?

श्री उदय मुनि जी

जन्मना अजैन, किन्तु मान्यता में जैन एक सेवानिवृत्त शिक्षक अपने जैसे अतिथि शिक्षक नवयुवक साथी के साथ आए। बोले- इनकी कोई समस्या है। नवयुवक बोला- कुछ दिन से नींद में डरावने स्वप्न आते हैं, किसी कार्य में मन नहीं लगता, एकाग्रता नहीं रहती, आत्महत्या कर लूँ, इस तरह तक के विचार बनते हैं।

उनका परिचय लिया। बोले- जीवविज्ञान का स्नातक हूँ। भारतीय लोक सेवा आयोग में 'कमिश्नर' पद हेतु तैयारी कर रहा हूँ। अभी एक माध्यमिक विद्यालय में दैनिक वेतन पर अध्यापन कर रहा हूँ।

ऐसे एक नहीं लाखों नवयुवक-नवयुवतियाँ हैं, जो उक्त वर्णित समस्या से ग्रस्त हैं और कई आत्महत्या कर लेते हैं, ऐसे आज कई उदाहरण हैं। कारण क्या है? दो-ढाई वर्ष की अल्पायु से माता-पिता उसे महत्त्वाकांक्षी ही नहीं अति महत्त्वाकांक्षी बनने की प्रेरणा ठूँसते रहते हैं। उसकी शारीरिक-बौद्धिक क्षमता, रुचि-अभिरुचि-रुझान को देखते ही नहीं। कभी-कभी तो माता-पिता जो स्वयं नहीं कर पाए, उस शिक्षा, धन और पद-प्राप्ति की अब अपने बच्चों से अपेक्षा करते हैं। भोगवादी, धन-पद लोलुपी आधुनिक अंधी दौड़ में मेरे बेटे-बेटी न पिछड़ जाएँ इस हेतु हजारों ही नहीं लाखों रुपए लगाकर, स्वयं उनके साथ प्राथमिक कक्षाओं से जूझते हैं, पीछे पड़े रहते हैं। आशानुकूल प्रगति नहीं देखकर फटकारते-धिक्कारते-दुत्कारते हैं।

पूरी पढ़ाई भोगों की, धन-पद-ऐश्वर्य पाने की, शरीर की या पुद्गल की ही करते-करवाते हैं। नश्वर-अनित्य-क्षणभंगुर, अशुचि के भंडार शरीर, उसकी पुष्टि और इन्द्रिय विषयों की पूर्ति, यश-प्रतिष्ठा का ही लक्ष्य कराते हैं। साथ में नैतिकता, नीति एवं धर्म के संस्कार देते नहीं। न ऐसा साहित्य पढ़ने हेतु देते हैं न ऐसी कहानियाँ सुनाते हैं, न कभी धर्म गुरु के पास ले जाते हैं, जैसे मात्र उसे पशुवत् जीवन जीने की ही कला सिखाते हैं, ऐसे माता-पिता या पालक उसके महाशत्रु हैं।

बालक पर शक्ति से अधिक बोझा डाल दें और वह न उठा पाए तथा पालकों की तानेबाजी सुनने को मिले तो उसमें निराशा आती है। रुचि और शक्ति के विपरीत कार्य करने से उसे ऊब और फिर असफलता हाथ लगती है। तभी अपेक्षानुसार नहीं बन पाने से मिली झिड़कियों से उसे हताशा होती है। उससे उसमें हीन ग्रंथि बनती है। आगे जाकर वह कुंठित हो जाता है, किसी कार्य में एकाग्र नहीं हो पाता और अन्ततः आत्महत्या तक कर लेता है।

उक्त नवयुवक की तरह अनेक युवक एवं किशोर ऐसी मानसिक विकृतियों के शिकार हो जाते हैं। एक दृष्टान्त है- एक बार राजा-रानी वृषभशाला में गए। शर्त लगी, कौन इस बछड़े को उठा लेता है, देखें। पुरुष शक्ति से राजा ने उठा लिया, रानी ने हार नहीं मानी। राजा राजकाज में लग गए। रानी प्रतिदिन जाकर उस बछड़े को उठाती रहती थी। एक वर्ष बाद पुनः दोनों वृषभशाला गए। अब वह बछड़ा बैल बन चुका था। रानी ने शर्त लगाई कि कौन इस बैल को उठा सकता है। राजा नहीं उठा सके, पर उसी रानी ने उसे उठा लिया। क्यों? प्रतिदिन के अभ्यास से रानी में शक्ति बढ़ गई।

यदि यही नियम माता-पिता या नवयुवक समझ लें तो निश्चित ही उन्हें सफलता मिलेगी। जो भी कार्य योजना बनाएँ, अपनी कार्यक्षमता, दक्षता को तोल लें और उसी अनुसार कार्य करते जाएँ, शक्ति बढ़ाते जाएँ तो वांछित लक्ष्य को पा जाएँगे। अभ्यास से दस-बीस प्रतिशत अधिक निरन्तर प्रगति होगी। अति महत्त्वाकांक्षी योजना न बनाएं, क्योंकि उसमें हुई विफलता से निराशा-हताशा-कुंठा उत्पन्न हो जाएगी।

भरपूर अध्ययन और पुरुषार्थ करते हुए भी वैसी सफलता नहीं मिली जैसी न्यून पुरुषार्थ वाले को मिल गई। तब सोचें-यह मेरे पूर्वोपार्जित कर्म का फल है। किसी ईश्वर, देवी-देवता, भाग्यविधाता या अन्य किसी शत्रु को दोष न दें। उस समय समभाव से, सहनशीलता से भोग लें तो नए कर्म बंध नहीं होंगे। यदि घबरा गए, आर्त्तध्यान (रोना-झींकना) कर लिया तो हाथ का कार्य भी बिगड़ जाएगा और भारी कर्मबंध हो जाएगा। तब धैर्यपूर्वक अपनी संकल्प-शक्ति को बढ़ाकर फिर से जुट जाएँ तो वांछित सुफल मिलेंगे। कार्य में एकाग्रता बढ़ती जाएगी।

अब शिक्षक को लगता है, मैंने इतनी ऊँची शिक्षा ली, मुझे अच्छा पद

और वेतन मिलना चाहिए था। वह न मिलने से उक्त दुष्परिणाम होते हैं। सफलता का अनुभूत राज है- "हाथ में आए कार्य को भरपूर लगन-निष्ठा-ईमानदारी से पूरा करो।" कक्षा में जाओ तब यह मत देखो कि कितना वेतन मिलता है। वैसा ही पढ़ाओ जैसे दस हजार पाने वाला पढ़ाता है। उस कार्य में पूरी दक्षता से निरन्तर कार्यक्षमता, दक्षता बढ़ती जाएगी और धारित महत्त्वाकांक्षा भी पूरी हो जाएगी। वर्तमान कार्य से संतोष और निरन्तर उन्नति का लक्ष्य रहना चाहिए।

उस लक्ष्य की पूर्ति के लिए अपनी संकल्प शक्ति को बढ़ाओ। कार्यपूर्ति में, लक्ष्य की सफलता में वही मुख्य उपाय है। मनोबल ही कमजोर हो तो विफलता हाथ आएगी। दृढ़ आत्मशक्ति से आगे बढ़ो।

नकारात्मक सोच आने ही मत दो। सकारात्मक सोच बनाओ। चेतन दशा में साइकिल सामने आती देख, वाहन पास से गुजरता देख, यदि यह भय लगा कि यह मुझे टक्कर मार देगा, समझो टक्कर मार देगा। न भी मारे तो उस भय या किसी भी विषय में जो आशंका-कुशंका से नकारात्मक विचार बने, अर्धचेतन में वह आठ गुना, अचेतन (निद्रा-स्वप्न) में सोलह गुना होकर आएगा। उसी का दुष्फल है, डरावने स्वप्न आना।

कुंठाग्रस्त व्यक्ति ही आत्महत्या के विचार लाता है। सोचें कि क्या इससे दुःखों का अन्त हो जाएगा? आत्महत्या करने के विचारों से और आत्महत्या करते हुए इतने भयंकर आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान से उसके नरकगति के बंध पड़ जाते हैं। सकारात्मक सोच के लिए ध्यान रखें कि कोई आपके बुरे के लिए नहीं सोच रहा है। यदि मैं स्वच्छ हृदय हूँ तो दूसरा भी वैसा ही है, इस मानव-तन को पूर्व भवों के अनन्तपुण्य का फल मानें। मात्र यही एक भव जीने के लिए नहीं है कि दुःख असह्य होने पर आत्महत्या कर ली तो दुःखों का अन्त हो जाएगा। आत्महत्या से तो अनेक भवों में दुःखों की शृंखला ही बढ़ती जाएगी।

जीवन को एक संघर्ष मानो। हँसते-खेलते जो इन संघर्षों को जीत लेता है वही सांसारिक अपेक्षा से विजयी होता है। इसके लिए सत्साहित्य का पठन करें, धर्म के संस्कारों से ओतप्रोत होकर नियमित स्वाध्याय करें तो यह भव भी सुधरे और परभव भी सुधरे।

नवयुवक बुझा-बुझा सा, मायूस चेहरा लेकर आया था। मैंने कहा- अन्दर में उमंग, उल्लास, उत्साह, आनंद की अनुभूति करो। विषाद के कारण भी

हों तो प्रसन्नचित्त रहो। मुस्कुराते रहो। निराशा और हताशा को पास फटकने ही मत दो। सदा आशावादी दृष्टिकोण रखो। नीति और धर्म के संस्कारों से सदा बाहर में भी सुखी-आनंदित रहोगे और आत्मा में भी सुख-परमानंद की प्राप्ति होगी।

मात्र पाँच मिनट रुकूँगा, ऐसा साथी को कहकर आया उक्त नवयुवक उठना नहीं चाहता था। प्रसन्नचित्त होकर एवं संकल्प शक्ति भरकर लौटा। बार-बार आऊँगा, कहता गया।

घर-घर पहुँची जिनवाणी

श्री कस्तूरचंद जैन 'अष्टम'

जन-जन का कल्याण कर रही, घर-घर पहुँची जिनवाणी।
इस भौतिकता के युग में है, सचमुच सबकी कल्याणी।।
सम्पादकीय विचार वारिधि, सर्वोत्तम है आगम वाणी।
गुरुजनों के प्रवचन हर लेते, कलिमलता जीवन की।
धारावाहिक उपन्यास को जब पढ़ते ही जाते हैं।
क्रमशः आगामी पृष्ठों पर, लालायित हो जाते हैं।
कब आयेगी बाट देखते रहते, अगली जिनवाणी।
परम पुनीत पाप निकंदन, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
नारी प्रेरणा युवा स्तम्भ, आदर्श प्रेरणा देते हैं।
बाल स्तम्भ सभी बच्चों को, मंत्र मुग्ध कर देते हैं।
त्रैमासिक प्रतियोगिता में सब, युवा, वृद्ध लग जाते हैं।
बार-बार चिंतन, अध्ययन से, अपना ज्ञान बढ़ाते हैं।
सामायिक, स्वाध्याय, मनन, चिंतन है गुरुवर की वाणी।
जन-जन का कल्याण कर रही, घर-घर पहुँची जिनवाणी।
चिंतन, कण, संवाद समस्या, समाधान अति रुचिकर है।
संरक्षक श्री रत्न हितैषी श्रावक संघ जोधपुर है।
देश-विदेशों के पाठक पढ़, अति हर्षित हो जाते हैं।
ग्राम-ग्राम, ढाणी-ढाणी में, जिनवाणी मंगवाते हैं।।
जैन धर्म का अभ्युदय करने वाली है जिनवाणी।
जन-जन का कल्याण कर रही, घर-घर पहुँची जिनवाणी

-नृसिंह कॉलोनी, वार्ड-18, खेरलीगंज-321606, जिला-अलवर (राज.)

स्वास्थ्य–विज्ञान

रोग-निदान में सहयोगी : यिन-यांग का सिद्धान्त

डॉ. चंचलमल चोरड़िया

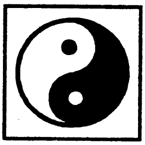

प्रकृति में सभी घटनाक्रमों और गतिविधियों के संचालन में कुछ सनातन नियम और सिद्धान्त होते हैं। प्रत्येक घटना के दो पक्ष होते हैं। प्रत्येक क्रिया के दो आधार होते हैं। वस्तु के दो भाग होते हैं, जिसके आधार पर एक दूसरे की तुलना की जा सकती है। एक के साथ दूसरे का अस्तित्व जुड़ा होता है। प्रारम्भ और अन्त, निर्माण और विनाश, जन्म और मृत्यु के बीच सारा घटनाक्रम चलता रहता है। जैसे दिन-रात, अन्धेरा-उजाला, आगे-पीछे, ऊपर-नीचे, ठण्डा-गरम, अन्दर-बाहर, बड़ा-छोटा, स्त्री-पुरुष, कोमल-कठोर आदि। दोनों का अस्तित्व साथ-साथ होता है। जन्म के बिना मृत्यु का अस्तित्व नहीं होता। दूसरी मंजिल प्रथम मंजिल की अपेक्षा ऊँची होती है जबकि तीसरी मंजिल की अपेक्षा नीची होती है। जोड़े के दोनों भागों की स्थिति बदलती रहती है जैसे अन्धेरा 'उजाले' में, क्रोध 'शांति' में, अनुकूलता 'प्रतिकूलता' में, हर्ष 'शोक' में, सुख 'दुःख' में, कमजोर 'बलवान' में बदल जाता है तो कभी-कभी इसके विपरीत भी होता है, तदनुसार शक्तिशाली कमजोर हो जाता है। प्रकृति के इस सनातन सिद्धान्त को चीन में यिन-यांग का सिद्धान्त कहते हैं।

सृष्टि की सारी गतिविधियों के संचालन और नियन्त्रण में यिन - यांग सिद्धान्त की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। पोजेटिव और नेगेटिव तारों को बिजली उत्पादक अथवा वितरक यंत्रों से जोड़ने पर ही उनमें बिजली का प्रवाह संभव होता है। चुम्बक का उत्तरी ध्रुव दक्षिणी ध्रुव के प्रभाव को तथा दक्षिणी ध्रुव उत्तरी ध्रुव के प्रभाव को नियन्त्रित करता है। चलते हुए वाहनों की गति उनके ब्रेक ही नियन्त्रित करते हैं। साथ ही यदि ब्रेक पूरी क्षमता से कार्य करें तो वाहन नहीं चल सकता। इस प्रकार यिन-यांग के बिना कोई प्रवृत्ति, हलन-चलन, परिवर्तन हो नहीं सकता। जब यिन ऊर्जा बढ़ती है तो यांग ऊर्जा घट जाती है और जब यांग ऊर्जा बढ़ती है तो यिन उसी अनुपात में कम हो जाती है। संयोग 'वियोग' में और वियोग 'संयोग' में बदलते रहते हैं।

यिन-यांग के गुणों में बाह्य रूप से असमानता अथवा विरोधाभास होते हुए भी काफी समानताएँ होती हैं। जैसे चुम्बक के दोनों ध्रुव लोहे को आकर्षित

करते हैं। पति-पत्नी साथ-साथ रहते हैं। दोनों मिलकर परिवार चलाते हैं। सुखद प्रसंगों पर दोनों प्रसन्न और प्रतिकूल प्रसंगों पर दोनों दुःखी होते हैं। दोनों परिवार की सुख सुविधा हेतु प्रयत्नशील रहते हैं। एक उद्देश्य हेतु कार्य करते हुए भी दोनों की संरचना, अस्तित्व, जीवन शैली पूर्ण रूप से एक जैसी नहीं होती। दोनों के सहयोग से ही मानव जैसी कृति का सृजन होता है। दोनों के दायित्व और कर्त्तव्य अलग-अलग होते हैं। दोनों के संतुलित तालमेल बिना सुखी परिवार की कल्पना फलीभूत होना कठिन होती है।

ब्रह्माण्ड की सामान्य अवस्था में यिन-यांग संतुलित रहते हैं, परन्तु असन्तुलन की अवस्था में प्राकृतिक आपदाएँ उत्पन्न होने लगती हैं। यिन-यांग का संतुलन स्थिर नहीं रहता, परन्तु आपस में बदलता रहता है। दोनों के निश्चित तालमेल और परिवर्तन के कारण ही प्रकृति में निर्माण और विनाश का क्रम चलता रहता है। जब तालमेल पूर्ण रूप से समाप्त हो जाता है तो उस वस्तु का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है।

यिन-यांग के अनुसार शारीरिक अंगों का वर्गीकरण-

शरीर में जो भाग सामने, आगे, ऊपर, कोमल अथवा खाली होते हैं, वे भाग तुलनात्मक दृष्टि से यांग से संबंधित होते हैं। इसकी तुलना में जो भाग पीछे, अन्दर, नीचे अथवा ठोस होते हैं, वे अंग यिन से संबंधित होते हैं। शरीर में भी इसी आधार पर प्रमुख अंगों को यिन-यांग के आधार पर विभाजित किया जा सकता है। जिसका विवरण निम्न प्रकार से है -

यिन अंग	फेंफड़ा	हृदय	गुर्दा	लीवर	स्पलीन/पेन्क्रियाज	मस्तिष्क
यांग अंग	बड़ी आंत	छोटी आंत	मूत्राशय	पित्ताशय	आमाशय	मेरुदण्ड

इसी प्रकार शरीर के आगे-पीछे का भाग, बांया-दाहिना, ऊपर-नीचे, हाथ-पैर पर भी यिन यांग का सिद्धान्त लागू होता है। यिन-यांग का आधार तुलनात्मक और समान गुणों अथवा गतिविधियों पर आधारित होता है। यिन और यांग एक ही प्रकार की ऊर्जा से विशेष संबंधित होते हैं। जब तक शरीर में किसी अंगों के जोड़ों के दोनों अंगों में ऊर्जाएँ संतुलित होती हैं तब तक दोनों अंग स्वस्थ रहते हैं। साथ ही शरीर में प्रत्येक अंग, उपांग, अवयव का कोई न कोई अवश्य सहयोगी होता है, जो आवश्यकता पड़ने पर उसके कार्यों में आंशिक सहयोग देता है। **ये अंग पति-पत्नी की भांति एक दूसरे के पूरक होते हैं। अतः किसी एक अंग में रोग होने की अवस्था में उसके सहयोगी अंग पर उसका विशेष प्रभाव**

पड़े बिना नहीं रहता। जब एक अंग अधिक सक्रिय हो जाता है तो, उसका पूरक अंग उसी अनुपात में असक्रिय भी हो सकता है। कभी-कभी एक अंग के रोग की अभिव्यक्ति उसके पूरक अंग में भी होने लगती है। **अधिकांश चिकित्सा-पद्धतियां प्रायः उसी अंग का उपचार करती हैं, जिनके लक्षण उनके ध्यान में आते हैं। परन्तु यदि रोग का कारण उसका पूरक अंग में हो तो बहुत प्रयास करने के बावजूद रोगों से राहत न दिला पाने के कारण उस रोग को असाध्य बतला दिया जाता है।** जैसे यदि कोई व्यक्ति अपने पत्नी के संक्रामक रोग के कारण तनावग्रस्त हो तो, उस व्यक्ति का तनाव तब तक दूर नहीं किया जा सकता, जब तक उसकी पत्नी रोगमुक्त नहीं होती। आज बहुत से मधुमेह के रोगी आमाशय को ठीक रखकर अर्थात् पाचन के नियमों का पालन कर मधुमेह से स्थायी रूप से चन्द दिनों में ठीक हो सकते हैं। इसी प्रकार हजारों हृदय रोगी छोटी आंत को स्वस्थ रख हृदय रोगों से चन्द दिनों में छुटकारा पा सकते हैं। दवाइयों की दासता से मुक्त हो सकते हैं।

कहने का सारांश यही है कि चिकित्सा करवाते समय चाहे, उपचार हो अथवा निदान, हमें रोग के कारणों को यिन-यांग के आधार पर भी विभिन्न दृष्टिकोणों से समझना होगा तथा उनमें किसी भी विधि द्वारा पुनः सन्तुलन करने से उपचार शीघ्र एवं प्रभावशाली हो जाता है।

जिन रोगों का प्रायः सही निदान नहीं हो पाता तब दी गई दवा जीवन की स्थायी आवश्यकता बन जाती है। ऐसे रोगों में संबंधित यिन-यांग अंगों के संतुलन से चमत्कारी परिणाम शीघ्र मिल सकते हैं।

सभी चिकित्सकों को अपना पूर्वाग्रह छोड़ इस सनातन सत्य को स्वीकार करना चाहिए ताकि रोगी का समग्र दृष्टिकोण से उपचार अथवा निदान किया जा सकता है। एक पक्षीय चिन्तन से बहुआयामी मानव शरीर को समझना असम्भव न भी हो तो कठिन अवश्य होता है। उपचार के बावजूद भी जब मधुमेह, हृदय, अस्थमा आदि रोगों से छुटकारा न मिले तो ऐसी परिस्थितियों में यांग अंगों में गड़बड़ी की अधिक संभावना हो सकती है। **अतः आधुनिक चिकित्सकों द्वारा असाध्य माने जाने वाले मधुमेह के रोगियों को आमाशय, हृदय रोगियों को छोटी आंत तथा अस्थमा के रोगियों को फेंफड़ों के साथ-साथ, बड़ी आंत को भी ठीक करना चाहिये, जिससे उपचार अत्यधिक प्रभावशाली एवं स्थायी हो सकता है।**

-चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर (राज.)

बाल-स्तम्भ

अनुभव की कीमत

श्री दिनेश मुनि जी म.सा.

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 5 अप्रेल 2009 तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरूणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-250 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-200 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 150 रुपये तथा 100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

किसी गाँव में एक बुढ़िया रहती थी। उसका एक ही बेटा था और उसका नाम था बब्बन। बब्बन बचपन से ही बहुत तेज बुद्धि का था। दोनों माँ बेटा जमींदार के खेत पर काम करते थे। उसी मजदूरी से वे अपना जीवनयापन करते थे।

एक दिन की बात है कि नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्य विद्याधर उस गाँव में किसी कार्यवश आए। उन्होंने बब्बन को देखा तो बातों ही बातों में उससे प्रश्न किया कि एक आँख से दो पेड़ दिखते हैं तो बताओ दो आँख से कितने पेड़ दिखेंगे? बब्बन ने तुरन्त जवाब दिया- दो पेड़। बालक की मेधा को देखकर वे समझ गए कि यह लड़का बुद्धिमान है। उन्होंने बब्बन की माँ से कहा कि-"माई, तुम्हारा यह पुत्र बड़ा ही होनहार और प्रतिभाशाली है। आप इस बच्चे की शिक्षा-दीक्षा का पूरा ध्यान रखिए।"

बब्बन की माँ ने कहा- "पण्डित जी, हमारे पास पेट भरने के लिए अन्न के तो लाले हैं, फिर इस लड़के की पढ़ाई की अच्छी व्यवस्था कैसे कर सकते हैं? अब आप ही बतलाइए कि इस लड़के को किस प्रकार पढ़ाऊँ?"

आचार्य ने कहा- "तुम इस बच्चे की पढ़ाई का प्रबन्ध नहीं कर सकती हो, तो इसे मेरे साथ नालंदा भेज दो। फिर देखना कि यह बच्चा पढ़

लिख कर इतना ज्ञानी बनेगा कि इसके समान विद्वान् राज्यभर में कोई नहीं मिलेगा।''

माँ को आचार्य की बात सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने आचार्य के साथ उस बच्चे को नालन्दा पढ़ने के लिए भेज दिया।

बब्बन बारह वर्ष तक आचार्य की देखरेख में रहा और बहुत ही परिश्रम से अध्ययन किया। अध्ययन करके वह बारह वर्ष बाद घर वापस आया।

घर वापस आकर उसने अपनी माता के चरण स्पर्श किए और कहा- ''माँ, अब तुम सब चिंता छोड़ दो। तुम्हारे दुःख के दिन जल्दी ही समाप्त हो जायेंगे। मैं एक ऐसा ग्रन्थ लिखूँगा, जैसा कि आज तक किसी ने नहीं लिखा।''

बब्बन जब अध्ययन करके वापिस आया तो वह अपने साथ बहुत से ग्रन्थ लाया था। वह सुबह से शाम तक उन पुस्तकों के अध्ययन में डूबा रहता था। कुछ देर पढ़ता और फिर लिखने में व्यस्त हो जाता था। प्रातः से शाम तक उसका यही क्रम चलता था। इस प्रकार उसे छह महीने व्यतीत हो गए। वह जितने पृष्ठ लिखता उनको पढ़ता व बाद में फाड़ देता। इसके पश्चात् वह नए सिरे से लिखना प्रारम्भ कर देता।

माँ चिंतित रहती थी और कहती रहती थी- ''बेटा, ग्रन्थ यदि नहीं लिखा जा रहा है तो मत लिखो, लेकिन अपना जीवन क्यों संकट में डाल रहे हो। इससे तो अच्छा है कि तुम ग्रन्थ लिखने का झंझट ही छोड़ दो।''

एक दिन शाम के समय एक संत उसके घर आए। संत ने कहा- ''क्या बात है माई ? तुम इतनी उदास क्यों लग रही हो?''

बब्बन की माँ ने कहा-''उदासी की बात तो है ही महाराज! मेरा पुत्र जब से विद्याध्ययन करके आया है, तब से बराबर ग्रन्थ लिखने में लगा हुआ है। जितना एक दिन लिखता है, उतना ही अगले दिन फाड़ देता है। इस प्रकार क्या ग्रन्थ लिखने का कार्य पूर्ण हो सकेगा? कहते-कहते बब्बन की माँ की आँखों में आँसू आ गये।

संत ने उसके पुत्र को बुलाया। बब्बन आया और उसने संत को

प्रणाम किया। इसके पश्चात् माँ से पूछा- "क्या आज्ञा है माँ?"

माँ ने कहा कि संत तुमसे कुछ बात करना चाहते हैं, तो उसने संत से प्रार्थना की- 'कहिए गुरुदेव।'

संत ने कहा-'सुना है तुम नालन्दा विश्वविद्यालय के सबसे मेधावी छात्र थे। फिर भी तुम जो ग्रन्थ लिख रहे हो उसे पूर्ण नहीं कर पा रहे हो। इसका क्या कारण है?'

बब्बन ने कहा- "पूज्यवर! मैं अपने लिखे हुए को पुनः पढ़ता हूँ तो मन में लगता है कि अभी कुछ अधूरा है, इसमें कुछ छूट गया है, अभी यह ग्रहणीय नहीं बन पाया है, इसमें सुधार की आवश्यकता है। इन विचारों के आते ही मैं उन लिखे हुए कागजों को फाड़ देता हूँ।"

संत ने चिन्तन कर कहा- "माई! यह तुम्हारा लड़का बहुत विद्वान् है लेकिन इसकी दिनचर्या में बहुत बड़ा दोष है। इसी कारण से यह कुछ भी नहीं लिख पा रहा है।"

बब्बन की माँ संत की बात सुनकर हैरानी में पड़ गई। बब्बन को भी इस बात से बड़ा आश्चर्य हुआ।

संत ने कहा-"बात यह है कि तुमने केवल पुस्तकों का अध्ययन ही किया है। शब्द ज्ञान से लिखने की कला तो तुमने अर्जित कर ली, किन्तु उन शब्दों में जान डालने वाले अनुभव को नहीं प्राप्त किया। केवल ग्रन्थ पढ़कर ही तुम ग्रन्थ लिखना चाहते हो। जीवन की खुली पुस्तक पढ़ना तुमको अभी तक नहीं आया।"

बब्बन संत की बात को ठीक प्रकार समझ गया।

बब्बन ने उसी दिन से गाँव-गाँव घूमना प्रारम्भ कर दिया। वह जनता की सेवा करने लगा। प्रत्येक व्यक्ति के दुःख को अपना ही दुःख समझकर उसकी सेवा करता। शाम को थक कर घर लौटता और फिर ग्रन्थ लिखने में लग जाता।

कई महीनों के पश्चात् जब वे संत पुनः बब्बन के घर आये तो देखा कि उसकी माँ बहुत प्रसन्न थी।

संत ने कहा- "लगता है माँ, तुम्हारे पुत्र ने वह ग्रन्थ पूर्ण कर

लिया है।"

उसने कहा-"हाँ, महाराज! ग्रन्थ पूरा हो गया है। ग्रन्थ को पूरा करके वह राजदरबार में ले गया है। विद्वानों ने उसकी बहुत प्रशंसा की है। यदि आप उसे जीवन का पाठ न पढ़ाते, तो आज भी मेरा पुत्र ग्रन्थ पूरा न कर पाता और वह कागजों को लिख-लिखकर फाड़ता रहता। पढ़-लिखकर भी अनपढ़ रहता।"

प्रश्न :-

1. नालन्दा विश्वविद्यालय के आचार्य ने बब्बन की प्रतिभा को कैसे पहचाना?
2. बब्बन की पढ़ाई की व्यवस्था कैसे हुई?
3. बब्बन ने अपने अनुभव की कीमत को कैसे जाना?
4. क्या आप भी अपने अध्ययन में बब्बन की तरह कमी महसूस करते हैं? लिखिये।
5. समानार्थक शब्द कहानी में से छाँटकर लिखिये- बुद्धि, पुस्तक, मुनि, दैनिकक्रम, परेशानी, श्लाघा, मतिमान।
6. 'पढ़ लिखकर भी अनपढ़ रहता'-बब्बन की माँ के इस वाक्य का भावार्थ लिखिए।

बाल-स्तम्भ [जनवरी-२००९] का परिणाम

जिनवाणी के जनवरी-2009 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'सनत्कुमार' कहानी के प्रश्नों के उत्तर 44 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक 20 में से दिये गये हैं-

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-250/-	नमन मेहता-पीपाड़ शहर	18.5
द्वितीय पुरस्कार-200/-	ऋषभ जैन-हिण्डौन सिटी	18.25
तृतीय पुरस्कार- 150/-	रौनक नागौरी-वल्लभनगर	18
सान्त्वना पुरस्कार- 100/-	निशा जैन-खेरलीगंज	17.75
	कानन जैन-जोधपुर	17.5
	रजत ओस्तवाल-पीपाड़ शहर	17.5
	संयम मेहता-पीपाड़ शहर	17.5
	पारुल खिंवसरा-जोधपुर	17.5

संवाद (21)

माह फरवरी-2009 की जिनवाणी में पूछे गये निम्नांकित प्रश्न के कतिपय उत्तर यहाँ प्रकाशित हैं-

प्रश्न-व्यक्ति को पहले धर्म में परिपूर्ण होने के बाद सदाचरण एवं व्यवहार की ओर बढ़ना चाहिए अथवा पहले आचरण व व्यवहार सुधार कर धर्म की ओर अग्रसर होना चाहिए। - *सिंहराज जैन, जोधपुर*

श्रीमती अभिलाषा अजय हीरावत, मुम्बई- जो व्यक्ति धर्म में परिपूर्ण हो गया हो, जिसने धर्म को जीवन में, आचरण में उतार लिया हो वह स्वतः ही सदाचारी होगा। यदि धर्म में परिपूर्णता के बाद उसे आचरण एवं व्यवहार सुधारने के मार्ग पर बढ़ने के लिए सोचना पड़े तो समझ लेना चाहिए कि वह धर्म में परिपूर्ण हुआ ही नहीं है। धर्म में परिपूर्ण व्यक्ति का आचरण व चारित्र स्वयं बोलता है एवं दूसरों को प्रेरणा प्रदान करता है।

धर्म में परिपूर्ण होने का अर्थ रटन्त विद्या नहीं है और न ही जानकारियों का संग्रह करना है। धर्म की परिपूर्णता, धर्म को हृदय में आत्मसात् करने में, आचरण बनाने में है। उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन की बारहवीं गाथा में कहा गया है- "सोही उज्जुयभूयस्स, धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई" अर्थात् जो साधक सरल होता है, उसे शुद्धि प्राप्त होती है और जो शुद्ध होता है उसी में धर्म ठहरता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जब व्यक्ति सरल, शुद्ध, सदाचारी होगा, तभी धर्म से परिपूर्ण होगा।

परमश्रद्धेय प्रमोद मुनि जी म.सा. फरमाते हैं कि "नैतिक व्यक्ति अर्थात् सदाचारी व्यक्ति धार्मिक हो यह जरूरी नहीं, किन्तु धार्मिक या आध्यात्मिक व्यक्ति अवश्य नैतिक होता है।" कहने का तात्पर्य यह है कि जो व्यक्ति धर्म में परिपूर्ण होता है उसे सदाचार व व्यवहार की ओर बढ़ना नहीं पड़ता, सदाचार और व्यवहार तो सदैव उसके आचरण में स्वतः ही रहता है।

'धर्म से परिपूर्ण' का अर्थ प्रश्नकर्त्ता की नज़र में यदि शास्त्रों और थोकड़ों के कंठस्थ करने से है तो ज्ञानियों की नज़र में उसे धर्म में परिपूर्ण नहीं कहा जा सकता, उसे मात्र जानकारियों का संग्रह कहा जा सकता है, क्योंकि

धर्म आचरण में उतारे बिना व्यक्ति धर्म से परिपूर्ण नहीं हो सकता, बिना आचरण को सुधारे व्यक्ति धार्मिक परिपूर्णता अन्तःकरण से नहीं प्राप्त कर सकतां, ऊपरी दिखावा अलग बात है।

अतः जो व्यक्ति धर्म में परिपूर्ण है वह स्वभावतः स्वतः ही सदाचारी होगा। यदि साधक साधना के प्रथम चरण में है, पूर्णता प्राप्त नहीं है तो उसे पहले आचरण व व्यवहार को सुधारना होगा, क्योंकि भगवान् की वाणी हमें बता रही है कि जो शुद्ध होता है उसी में धर्म ठहरता है।

श्रीमती पुष्पा गांधी, जोधपुर– जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, महत्त्वपूर्ण है और पाने योग्य है उसे निर्मित करना होता है। इससे विपरीत जो व्यर्थ है, कचरा है वह बिना मेहनत किए ही उग आता है। यदि कोई व्यक्ति बगीचा लगाना चाहता है तो उसे जमीन की खुदाई प्रारम्भ करके व्यर्थ के पत्थरों को हटाना होगा, मिट्टी को बदलना होगा, फिर खाद डालकर भूमि को उपजाऊ बनाकर बीज बोना होगा ताकि फूल खिल सकें। जिसको इसका बोध नहीं है, उसकी जमीन व्यर्थ पड़ी रहती है और उसमें व्यर्थ के घास-पात उग आते हैं। इसी प्रकार व्यक्ति को पहले आचरण और व्यवहार सुधार कर फिर धर्म की ओर अग्रसर होना चाहिये। ताकि धर्म की नींव मजबूत रहे। मन को एकाग्र करना इतना कठिन नहीं है, जितना कि मन को पवित्र रखना।

मनोहरलाल जैन, धार– यदि किसी से प्रश्न किया जाए कि रोटी पहले खाओगे या सब्जी? तो उसका क्या जवाब होगा, मात्र यही कि ये एक-दूसरे के पूरक हैं। धर्म और आचरण की उपयोगिता नहीं है। इनको जोड़ने के संधि सूत्र का नाम है- 'सम्यक्त्व'। तत्त्वार्थ सूत्र में भी यही कहा गया है- 'सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्राणि मोक्षमार्गः' अर्थात् सम्यक् दर्शन, सम्यग् ज्ञान और सम्यग् चारित्र ही मोक्ष मार्ग है। इसलिये धर्म+आचरण अर्थात् सम्यक् धर्माचरण ही मोक्ष का मार्ग है। यही आदर करने व आचरण योग्य है।

नेमीचन्द कटारिया, अजमेर– व्यक्ति को पहले अपना आचरण व व्यवहार सुधार कर धर्म की ओर अग्रसर होना चाहिए। प्रवचनसार में आचार्य कुन्दकुन्द ने बतलाया है- चारित्र धर्म है और वह धर्म समत्व कहा जाता है। मोह और क्षोभ से रहित आत्मा का जो परिणाम होता है वह समत्व है। जीवन में प्रतिकूलता व अनुकूलता में सम रहना ही धर्म में परिपूर्ण होना कहा

जायेगा।

आचार से पहले विचार बदलने चाहिए। व्यक्ति का वास्तविक रूप आचरण के द्वारा प्रकट होता है, पर आचरण किसी छोटी से छोटी क्रिया को करने के लिए स्वतंत्र नहीं है। मन अथवा हृदय इसे इधर-उधर भटकाता, दौड़ाता रहता है। इसके लिए मन को संयमशील एवं विवेकपूर्ण बनाना पड़ेगा। विचार के साथ बदला हुआ आचार ही महत्त्वपूर्ण होता है। श्रद्धा, ज्ञान व आचरण युक्त व्यक्ति ही सच्चा धर्मपरायण बन सकता है।

श्रीमती पुष्पा मेहता,पीपाड़ सिटी- जिसका जीवन सरल होता है वह स्वभावतः अमायी होता है। शास्त्रकारों ने बताया है- 'धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई' अर्थात् शुद्ध हृदय में ही धर्म टिकता है। जिसका जीवन सरल होता है, व्यवहार अच्छा होता है उसकी आत्मा शुद्ध बनती है।

धर्म को ग्रहण करने के लिए पहले आचरण बदलना होगा, व्यवहार अच्छा करना होगा, लोक विरुद्ध कोई भी आचरण नहीं करना होगा। इन सभी का अभ्यास करने से आत्मा शुद्ध व पवित्र बनती है तथा उसी शुद्ध आत्मा में धर्म का निवास रहता है। इसी प्रसंग में जब राजा भोज सिंहासनारूढ़ हो रहे थे, तभी सिंहासन पर लगी पुतली से आवाज आई- "अरे भोज! अगर इस सिंहासन पर बैठना है तो अपना हृदय इतना शुद्ध बनाओ जैसाकि एक बच्चे का होता है।" एक नाशवान सिंहासन को प्राप्त करने के लिए भी सरल एवं शुद्ध आचरण की आवश्यकता होती है तो परम दुर्लभ धर्म को समझने के लिए, उसमें परिपूर्ण बनने के लिए पहले आचरण व व्यवहार में सुधार जरूरी है। प्रभाव आचरण का ही पड़ता है विद्वत्ता का नहीं।

इतिहास ऐसे अनेक उदाहरणों से भरा पड़ा है जिन्होंने पहले अपने अन्दर के दुर्व्यसनों, खराब आदतों, हिंसक कृत्यों को छोड़कर अपने आपको धर्म की ओर अग्रसर किया और सच्चे धर्म को पाया। अर्जुनमाली ने हत्याएँ करना छोड़ा, चण्डकौशिक ने विषमयी फुंकार को छोड़ा, राजा प्रदेशी ने शिकार को छोड़ा, कसाई पुत्र सुलस ने अपने पैतृक व्यवसाय को छोड़ा, प्रभव डाकू ने डकैती को छोड़ा, राजा श्रेणिक ने अपने कट्टर मिथ्यात्वपन को छोड़ा।

(क्रमशः)

वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री राजमल जी संचेती

सरलता, सेवा भावना, सहनशीलता, सादा जीवन उच्च विचारों के धनी, कुशल शिक्षक, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्रीमान् राजमल जी संचेती का जन्म अमलनेर, जिला-जलगांव, महाराष्ट्र निवासी श्रीमान् मोहनलाल जी संचेती की धर्मपत्नी श्रीमती चाँदाबाई संचेती की कुक्षि से 26 जून, 1958 को हुआ।

आपने बी.एस.सी., बी.एड. तक की शिक्षा अमलनेर में प्राप्त की। वर्तमान में आप राजकीय माध्यमिक विद्यालय में द्वितीय श्रेणी विज्ञान विषय के शिक्षक के रूप में अपनी महती सेवाएँ दे रहे हैं। धार्मिक अध्ययन में आपकी विशेष रुचि होने के कारण आप सन् 1989 में स्वाध्याय संघ के सदस्य बने। तब से निरन्तर पर्वाधिराज पर्युषण में विभिन्न क्षेत्रों में जाकर जन-जन में धर्म जागरणा कर रहे हैं।

आपने प्रतिक्रमण सूत्र कण्ठस्थ कर, उत्तराध्ययन सूत्र, दशवैकालिक सूत्र, अन्तगड सूत्र और कल्पसूत्र का वाचन किया। 25 बोल, 67 बोल, समिति-गुप्ति का थोकड़ा, संज्ञा आदि का थोकड़ा तथा कई थोकड़ों का ज्ञानार्जन करते हुए आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की अष्टम कक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की। आपको कई भजन और चौबीसियाँ कण्ठस्थ हैं।

पर्वाधिराज पर्युषण में आप दोनों काल प्रतिक्रमण,प्रार्थना,अन्तगड सूत्र का वाचन,विवेचन और प्रश्नोत्तर, प्रवचन, दोपहर में चौपई श्रवण कराने के साथ धार्मिक पाठशाला में बच्चों को प्रतिबोध देकर धर्म के प्रति बच्चों की रुचि बढ़ाने का कार्य करते हैं। सायं प्रतिक्रमण के पश्चात् धर्म-चर्चा तथा विभिन्न धार्मिक प्रतियोगिताएँ आयोजित करते हैं।

आपने कई स्वाध्याय शिविरों में भाग लेकर ज्ञानार्जन किया तथा बच्चों के शिविरों में अध्यापन कार्य में अपना पूर्ण सहयोग देते रहते हैं।

आप प्रतिदिन नवकारसी करते हैं और रात्रि भोजन का त्याग करते हैं। सप्त कुव्यसनों का त्याग एवं पर्व-तिथियों पर कन्द-मूल एवं लिलोती का त्याग रखते हैं। प्रति गुरुवार को आयम्बिल तप करते हैं।

वर्तमान में आप श्री स्थानकवासी श्रावक संघ के सहमंत्री, आध्यात्मिक

शिक्षण बोर्ड के केन्द्राधीक्षक तथा विद्यालय में करुणा क्लब का संचालन अति कुशलता के साथ निर्वहन कर रहे हैं। आप अपने क्षेत्र को स्वाध्यायियों के पर्युषण सेवा देने हेतु प्रेरणा करते रहते हैं।

अभी तक आपने ताहराबाद, चांदूर रेलवे, हिरापुर, राजनी, हरताला, चारुणा, पांडरकवड़ा वेलोदा, शेलवड़, लोहारा पहूरढाबा, नागद, बावड़ी, तलेगांव, तोड़ापुर, दूसरबोर्ड आदि क्षेत्रों में पर्युषण सेवा द्वारा जैन धर्म की प्रभावना में सहयोग दिया।

आप सदा स्वस्थ रहें, दीर्घायु हों और जिनशासन की महती प्रभावना करें, यही प्रभु वीर से हमारी मंगल कामना है। —मोहनकौर जैन

सुख-दुःख का कर्त्ता स्वयं मनुष्य

कवि कस्तूरचन्द जैन "अष्टम"

स्वकृत्यों से ही मानव जीवन में सुख-दुःख उठाता है।
जैसा बोता है बीज कर्म फल, वैसा ही मिल जाता है।।
बीमारी, रोग, महामारी खुद ही पैदा कर पाता है।
निज कृत्यों की नहीं सोचता, फिर पीछे पछताता है।।
शारीरिक और मानसिक दुःख सब कर्मों से ही होता है।
भावावेशों के ज्वारों में, आत्मिक सुख को खो देता है।।
स्वार्थपरता, कलह, द्वेष, जब मानवीयता खो जाती है।
हो जाता पतन आत्मा का, जब क्रूर दृष्टि हो जाती है।।
उत्तम विचार रुक जाते हैं, मानव आक्रामक बन जाता है।
निज बुद्धि और विवेकहीन, खुद का ही घातक बन जाता है।।
सबसे ज्यादा कष्ट स्वयं को, देता नहीं सोचता है।
कितना समझालो फिर कोई, पर मन को नहीं रोकता है।।
उच्चादर्शों से युक्त सोच से काम करे, मन में लावे राग है।
निश्चित ही सारे दुःखों की, परिणति सुखों में हो जाती है।।
मानव क्या है? मानवता क्या है? इसको यदि स्वयं सोचा जाता है।
शारीरिक, मानसिक कष्टों से, निश्चित ही मुक्ति पा जाते हैं।।

-नृसिंह कॉलोनी, वार्ड नं. 18, खेरलीगंज-321606 जिला अलवर (राज.)

आओ स्वाध्याय करें

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा आयोजित

'आओ स्वाध्याय करें' त्रैमासिक प्रतियोगिता (20) का परिणाम

जिनवाणी के जनवरी, 2009 अंक में आयोजित त्रैमासिक प्रतियोगिता (20) में 386 प्रतियोगियों ने भाग लिया। यह प्रतियोगिता जिनवाणी के अक्टूबर से दिसम्बर 2008 के अंकों पर आधारित थी। सामान्य श्रेणी एवं युवा श्रेणी के सभी पुरस्कार ड्रा द्वारा निकाले गये हैं। परिणाम इस प्रकार है-

सामान्य श्रेणी

प्रथम पुरस्कार- 1001/- रुपये	गजराज सेठिया-धनारीकलां	(50)
द्वितीय पुरस्कार- 501/- रुपये	सुनीता नवलखा-कोटा	(50)
तृतीय पुरस्कार- 251/- रुपये	तिलोकचन्द जैन-आचीणा	(50)

सान्त्वना पुरस्कार- 100/- रुपये प्रत्येक

सुनीता लुणावत-आचीणा	(50)	सरला कांकरिया-जलगाँव	(49)
राजुल कोठारी-धुले	(49)	निर्मला सुराणा-बीकानेर	(49)
मोनिका सुराणा-नागौर	(49)	नीरा भण्डारी-ब्यावर	(49)
उषा मोदी-टोहाना	(49)	किरण कुम्भट-जोधपुर	(49)
नेनचन्द बाफना-जोधपुर	(49)	विजयलक्ष्मी लुणावत-जयपुर	(49)

युवा श्रेणी

प्रथम पुरस्कार- 1001/- रुपये	मनीष जैन-बैराथलकला	(50)
द्वितीय पुरस्कार- 501/- रुपये	रोहन लुणावत-इन्दौर	(50)
तृतीय पुरस्कार- 251/- रुपये	आयुषी जैन-आचीणा	(50)

सान्त्वना पुरस्कार- 100/- रुपये प्रत्येक

राजेश लुणावत-आचीणा	(50)	प्रियंका नाहर-जोधपुर	(50)
महेन्द्र जैन-इन्दौर	(50)	यश जैन-आचीणा	(50)
मधुबाला लुणावत-आचीणा	(50)	अरुणा जैन-होशियारपुर	(49)
समता डोसी-मेड़ता सिटी	(49)	नितेष जैन-सवाईमाधोपुर	(49)
निर्मल सेठिया-धनारी	(49)	श्वेता जैन-कोटा	(49)

49 अंक प्राप्त करने वाले अन्य प्रतियोगी: - पुष्पा हस्तीमल गुलेछा–ब्यावर, प्रमिला पोखरणा–धुले, सौ.पुष्पा दुधेड़िया–मेडतासिटी, किरण कुम्भट–जोधपुर, वीरेन्द्र कुम्भट–जोधपुर, राहुल कुम्भट–जयपुर, गणपत सुराणा–जोधपुर, मंजूश्री सुराणा–जोधपुर, हंसराज मोहनोत–जयपुर, भोपालचन्द सेठिया–जोधपुर, महेन्द्र जैन–आलनपुर, सिद्धिशुभेन्द्र बाफना–जोधपुर, दिनेश भंसाली–जोधपुर, जयमाला जैन–सवाईमाधोपुर, प्रियंका जैन–धनारी, बबीता सेठिया–धनारी, मनीषदीपक सेठिया–धनारी, मिथुन सेठिया–धनारी, प्रवीण जैन–बैराथनकला, वर्षा बाफणा–जोधपुर, संजना लुणावत–इंदौर, सुश्री अल्फा सुराणा–जोधपुर, प्रिंयका गांधी–जोधपुर, सौ.अन्तिमा

डोसी–ब्यावर, सुमेर वेद–धनारीकला, हेमलता कोठारी–धुले, राखी जैन–धुले, लता आंचलिया–धुले, दिव्या आंचलिया–धुले, यश जैन–धुले।

48 अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगी:- सौ.विमलाबाई बरड़िया, बुधमल बाघमार–मैसूर, हेमलता जैन–ब्यावर, हेमराज सुराना–जयपुर, कमलेश जैन–खेड़ली, सौ.मनीषा शिंगी–सूरत, दर्शिका टाटिया–जलगांव, सरोज रूणवाल–धुले, कोमल जैन–धुले, प्रवीणकुमार जैन–धुले, उषा बरडिया–धुले, एस.आर.जैन–धुले, अश्विनी जैन–धुले, सुनंदा लोढा–धुले, सुशीला रांका–जलगांव, बसंती गांधी–चन्द्रपुर, किरण जैन–अलीगढ, रिखबचन्द कांसवा–फरीदाबाद, माला जैन–बड़वानी, सरोज नाहर–नईदिल्ली, महेन्द्र जैन–चौथकाबरवाड़ा, चित्रा डागा–बूंदी, ललित जैन–अजमेर, प्रीतम चोरनपमार–मैसूर, शशिकला गांधी–जोधपुर, सरोज खाबिया–मैसूर, मोनिका देशलहरा–सिकंदराबाद, रीमा जैन–लुधियाना, ललित जैन–जयपुर, गुणमाला जैन–सूरवाल, ममता जैन–जोधपुर, शालिनी जैन–खेड़ली,अंजली जैन–हिंडौन, वदंना पूनमिया–पाली, नीलू जैन–लुधियाना, प्रज्ञा कुम्भट–ब्यावर, ममता लुंकड़–भोपालगढ़, सुनीता कुम्भट–ब्यावर, राजेन्द्र लुंकड़–भोपालगढ़, शिल्पा जैन–रतकुडिया, पारुल खींवसरा–जोधपुर, हितेष जैन–सवाईमाधोपुर, नीलम जैन–अजमेर, दीप्ति जैन–कोटा, प्रेम जैन–अलवर, शिल्पा जैन–जोधपुर, श्रीमती अर्चना कोठारी–बालोद, श्रीमतीरीना कोठारी–बालोद, डी.अनिल खाबिया–मैसूर, राजेश गांग–जोधपुर, योगिता गांग–जोधपुर,गौरव जैन–कोटा, शुभा लुंकड़–जोधपुर, मीना मेहता–पीपाड़, अनुजा कांकरिया–जलगांव, रश्मि झांमड़–धुले, कु.दीक्षा रांका–जलगांव।

47 अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगी:-राजेन्द्रकुमार जैन–जयपुर, शांतिलाल महात्मा–चितौड़, मंजू कांस्टिया–कोलकाता, विमला बोहरा–जयपुर, प्रमोद मेहता–अजमेर, पुष्पा गांधी–जोधपुर, सुधा डागा–बीकानेर, राजेन्द्रप्रसाद जैन–बजरिया, कंवलराज मेहता–जोधपुर, बी.आर. जैन–शिवनगर, अशोक बाबुलाल जैन–सूरत, सौ.मंगला शिंगी–दिगरशिवर, सुशीला मेहता–जोधपुर, इन्द्रा जैन–करौली, राजुल कांसवा–अजमेर, सौ.शीतलसंदेश बंब–लासुरस्टेशन, सौ.कंचनबाई बंब–लासुरस्टेशन, रेणु बोहरा–दिल्ली, आरती मुथा–अमरावती, हेमन्त डागा–बूँदी, जितेन्द्र जैन–चौथ का बरवाड़ा, रूचिका लुणावत–जोधपुर, मधु डोसी–मसूदा, संगीता देशलहरा–जोधपुर, बृजेन्द्र जैन–पॉवडेरा, नेमीचन्द खीवसरा–धुले, डी.सी.जैन–मैसूर, संगीता खाबीया–मैसूर, नथमल कोठारी–बालोद, सौ.विमलास्वरूपचन्द भंडारी–भंडारा, लेखराज जैन–मसूदा, कमलादेवी सेठिया–मसूदा, पुष्पा ओमप्रकाश मेहता–पीपाड़, पूजा जैन–जयपुर, गौरव जैन–जयपुर, जितेश जैन–जयपुर, सौ.मंजू बाफना–जलगांव, डॉ.कंचन कोटेचा–भुसावल, रश्मि कुन्दन कोटेचा–भुसावल, नेहा लुणावत–विजयनगर, योगेश जैन–जयपुर, विकास जैन–जयपुर, रुपेश जैन–आलनपुर, अनंत जैन–जयपुर, मनोज जैन–सवाईमाधोपुर, पीयुष जैन–सवाईमाधोपुर, रक्षिता जैन–सूरवाल, अक्षिता जैन–जोधपुर, विशाल जैन–मंदसौर, प्रभा जैन–खेड़ली, संदीप जैन–रतकुडिया, अंकुश जैन–खेड़ली, प्राची जैन–खेड़ली, मोनिका जैन–उनियारा, हेमंत जैन–जयपुर, प्रतीक्षा जैन–हिंडौन, लवीश जैन–आलनपुर, पवन जैन–जयपुर, अंकित जैन–जयपुर, सुनीता जैन–हिंडौन, मनीषा जैन–पाली, रुपमाला जैन–भीलवाडा, मंजुला छाजेड़–भीलवाड़ा, जयसिंह छाजेड़–समदड़ी, चित्रा जैन–करौली, श्रीमती ममता–करौली, कु.नेहा जैन–करौली, कमला सिघंवी–जयपुर, वैशाली कुम्भट–जोधपुर, मेरिना छाजेड़–समदड़ी, मोहील जैन–मदनगंज किशनगढ़, रुपल गांग–जोधपुर, मोनिका जैन–सवाईमाधोपुर, प्रीति जैन–ब्यावर, प्रीति जैन–भरतपुर, शिवकुमार जैन–भरतपुर, कु. सारिका बरडिया–चोपड़ा, अस्मिता डाकलिया–जोधपुर, दीपिका लुंकड़–भोपालगढ़, श्रीमती रितु बेगाणी–बीकानेर, चंचल गोलेछा–जयपुर, अनिलकुमार जैन–कोटा, जयमाला कांकरिया–पाली, कल्पेश धारीवाल–पाली, अमिताराजेश जैन–इंदोर, अभिषेकरतन बोहरा–बालोद, माधुरी जैन–बूंदी, चंद्रकला कांकरिया–पीपाड़, कु.मयुरी सतीश जैन–धुले, सौ.अनिता दुग्गड़–धुले, भावना लोढ़ा–धुले, शशीदेवी रतन बोहरा–बालोद।

46 अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगी:-पुष्पा मेहता–अजमेर, नवरतन जैन–पीपाड़, सुशील लुंकड–उमरगांवरोड़, लक्ष्मीचंद छाजेड़–बालोतरा, नोरतनमल चंगेरिया–अजमेर, सुभाषचंद धाड़ीवाल–भाईन्दर, आशा अग्रवाल–जयपुर, सुरेश पुनमिया–पाली, महावीरचन्द तातेड़–चैन्नाई, केसर गांग–जोधपुर, सुरेखा भण्डारी–पिपलगांवबसन्त, शकुंतलादेवी–चैन्नई, शारदा एच. मुथा–लासूर, सौ.सुनीता सुभाष धाडीवाल–भांइदर, जेठमल जैन–जोधपुर, सुधा संचेती–मसूदा, रतनलाल रांका–अजमेर, नोरतमल चंगेरिया–अजमेर, सुनील जैन–मैसूर, विमला चोधरी–अजमेर, पुष्पा जैन–

पाली, मुन्नालाल भंडारी–जोधपुर, सुबोध मोहनोत–नवसारी, गर्व लुंकड़–कोटा, अक्षय जैन–मदनगंज किशनगढ़, दीपिका जैन–जयपुर, शीतल जैन–जयपुर, मनोहर जैन–बलरामपुर, रीतू मेहता–चौरसियावासरोड़, ज्योति जैन–हिंडौन, मनोज जैन–जयपुर, दर्शना जैन–जयपुर, अनिता लोढ़ा–मंगलवाड़चौराहा, इन्द्रप्रसाद जैन–सवाईमाधोपुर, दिलीप जैन–सवाईमाधोपुर, प्रियंका जैन–सवाईमाधोपुर, सपना जैन–आलनपुर, पूजा हींगड़–जयपुर, धर्मेशकुमार–पाली, संगीता दरड़ा–जोधपुर, रितुसंदीप रांका– सेलाना, पूजा बाफणा–भोपालगढ़, सरला बाफणा–भोपालगढ़, स्वानिल जैन–अलवर, मंजू पालावत– अलवर, रजंना जैन–कोटा, खुशबुरानी मूथा–मैसूर, रूपल मेहता–दूदू, टीना मेहता–दूदू, सीमा जैन– स.मा., मिनी जैन–अलवर, महावीर जैन–अजमेर, सीमा जैन–जोधपुर, लाकेश जैन–मसूदा, विशाल जैन–इंदौर, सुमतिचंद मेहता–पीपाड़, दिव्या सालेचा–जोधपुर, पंकज जैन–जोधपुर, विकास सालेचा–जोधपुर, मयंक सालेचा–जोधपुर, प्रतिक्षा सालेचा–जोधपुर, प्रकाश सालेचा–जोधपुर।

सही उत्तर

उपर्युक्त त्रैमासिक प्रतियोगिता (20) के प्रश्नों के सही उत्तर जिनवाणी अंक एवं उसके पृष्ठ के साथ यहाँ दिए जा रहे हैं –

उत्तर	माह/पृष्ठ संख्या	उत्तर	माह/पृष्ठ संख्या
1. दीपावली	अक्टूबर/56	2. मरुदेवी	नवम्बर/19
3. असंतुलन	दिसम्बर/29	4. संसार	दिसम्बर/52
5. धर्म	नवम्बर/17	6. आत्मा	नवम्बर/48
7. विषय	दिसम्बर/53	8. पुण्योदय	नवम्बर/46
9. दुर्जन	अक्टूबर/56	10.नमस्कार सूत्र	दिसम्बर/30
11.प्रत्याख्यान	अक्टूबर/21	12.जीन	अक्टूबर/28
13.पुरिमताल	दिसम्बर/61	14.उदयन	दिसम्बर/6
15.जिनवाणी	अक्टूबर/52	16.जप	नवम्बर/44
17. तज्जीवतच्छरीरवाद	दिसम्बर/36	18. सहयोग	नवम्बर/11
19. सिद्धान्त	अक्टूबर/19	20. अव्याकृत	दिसम्बर/36
21. 24	दिसम्बर/8	22. 7	अक्टूबर/7
23. 1	नवम्बर/75	24. 21	अक्टूबर/16
25. 3	दिसम्बर/9	26. 46	अक्टूबर/22
27. 8	नवम्बर/63-64	28. 3	नवम्बर/110
29. 18	दिसम्बर/28	30. 111	अक्टूबर/88
31. धर्म द्वैध	नवम्बर/9	32. तीर्थंकर	दिसम्बर/31
33.रक्षा	अक्टूबर/55	34. उच्छृंखलता	अक्टूबर/63
35. दीक्षित	नवम्बर/53	36. सारावली प्रकीर्णक	अक्टूबर/34
37. अंगुत्तरनिकाय	नवम्बर/43	38. उत्तराध्ययन सूत्र	नवम्बर/45-46
39. प्रशमरति	नवम्बर/46	40. न्यूयार्क ट्रिव्युन हेराल्ड	दिसम्बर/70
41. हाँ	दिसम्बर/7	42. ना	अक्टूबर/10
43. ना	नवम्बर/18	44. ना	नवम्बर/20
45. हाँ	दिसम्बर/33	46. हाँ	अक्टूबर/43
47.ना	नवम्बर/5	48. हाँ	नवम्बर/31
49. ना	अक्टूबर/21	50. हाँ	अक्टूबर/72

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

बेहतर जीने की कला-प्रवर्तिनी चन्द्रप्रभाश्री, ***प्रकाशक*** - श्री जैन श्वेताम्बर पंचायती मन्दिर, 139, कॉटन स्ट्रीट, कोलकाता-700007, ***पृष्ठ***-120, ***मूल्य***-सदुपयोग, ***संस्करण***- सन् 2008

विचक्षण श्री जी म.सा. की शिष्या प्रवर्तिनी चन्द्रप्रभा श्री जी के 11 प्रवचन इस पुस्तक में संकलित हैं, जो व्यक्ति को भीतरी दृष्टि के सुधार के साथ मन, विचार, वाणी और व्यवहार को सुधारने की प्रेरणा करते हैं। चिन्ता के मकड़जाल से कैसे उभरा जाए तथा सेवा क्यों की जाए? दुःख की परिस्थिति को सुख में कैसे बदला जाये? शिक्षा में संस्कारों का रोपण क्यों हो? अहंकार के स्थान पर विनम्रता को क्यों अपनाया जाये? इत्यादि बिन्दुओं के समाधान प्रस्तुत पुस्तक में देने का प्रयास किया गया है। साध्वीजी कहती हैं कि यदि दुःखों से मुक्त होना है तो पाप से मुक्त होना होगा। इन्द्रियों को वशीभूत करने के लिए मन को वशीभूत करना आवश्यक है। पुण्य वही उपादेय है जिससे धर्म में बुद्धि बनी रहे, जो हमें दुर्गति से बचावे। धन-वैभव का उपयोग व्यसन, फैशन, विलासिता आदि में करना ग़लत है। इस प्रकार इस पुस्तक में अनेक ऐसे प्रेरणाप्रद वचन हैं, जो मनुष्य के व्यवहार को बेहतर जीवन जीने की कला सिखाते हैं।

प्राकृत तीर्थ (त्रैमासिक पत्रिका)- ***सम्पादक*** - प्रो. प्रेमसुमन जैन, ***प्रकाशक***- बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ, राष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन एवं संशोधन संस्थान, श्री धवलतीर्थ : प्राकृत भवन, श्रवणबेलगोला-573135 (कर्नाटक) ***सदस्यता***-त्रैवार्षिक-600/-, आजीवन-2100/-

प्राकृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन को प्रोत्साहन देने की दृष्टि से स्थापित बाहुबली प्राकृत विद्यापीठ के द्वारा जुलाई-सितम्बर 2008 की अवधि का त्रैमासिक 'प्राकृत तीर्थ' पत्रिका का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ है। इसमें हिन्दी, अंग्रेजी एवं कन्नड़ तीन भाषाओं में 14 लेख प्रकाशित हैं। हिन्दी में प्रकाशित लेखों में प्राकृत साहित्य पर आश्रित लेखों का आधिक्य है। अंग्रेजी खण्ड में दो लेख प्रकाशित हैं जिनमें जैन दर्शन में आकाश की अवधारणा और शिक्षा तथा सांस्कृतिक महत्त्व का विचार किया गया है। कन्नड़ भाषा में चार रचनाएँ प्रकाशित है। कन्नड़ भाषा में रचनाएँ प्रकाशित होने से कर्नाटक के जैन-जैनेतर बन्धु लाभान्वित हो सकते हैं। प्राकृत तीर्थ नाम अच्छा है, किन्तु प्राकृत भाषा में भी यदि लेख प्रकाशित किए जाएं तो इस नाम की अधिक सार्थकता सम्भव है।

आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की अस्थायी वरीयता सूची

(4 जनवरी 2009 परीक्षा)

अ. भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर द्वारा 4 जनवरी 2009 को आयोजित कक्षा 1 से 8 तक की परीक्षा की अस्थायी वरीयता सूची प्रकाशित की जा रही है।

जैन धर्म परिचय (प्रथम कक्षा)

रोल नं.	विद्यार्थी का नाम	केन्द्र	प्राप्तांक	स्थान
189	रोशनी प्रदीप जी बोरूंदिया	यवतमाल	98.5	प्रथम
2114	सलोनी जिनेश जी जैन	जम्मू	97.5	द्वितीय
282	सीमा प्रितेश जी कर्नावट	कोल्हापुर	97	तृतीय

जैन धर्म प्रवेशिका (द्वितीय कक्षा)

2827	राजश्री सुनील कुमार जी कर्नावट	चाकण (पूना)	97.5	प्रथम
2301	सरिता शिवकुमार जी संकलेचा	अमरावती	97	द्वितीय
2782	कुमकुम अनिल जी मुणोत	हिंगनघाट	96.5	तृतीय
2832	साधना कुमार जी दरडा	चाकण (पूना)	96.5	तृतीय

जैन धर्म प्रथमा (तृतीय कक्षा)

5488	मीना सुनील जी मुथा	अंबाजोगाई	98	प्रथम
7735	विरक्ता शिल्पा श्रीश्रीमाल	बैंगलोर	97	द्वितीय
2908	पवन पारसकुमार जी जैन	बेगूँ	96	तृतीय
6174	सीमा अगरचन्द जी चोरडिया	अतरिया बाजार	96	तृतीय

जैन धर्म मध्यमा (चतुर्थ कक्षा)

633	मंजुला महावीरचन्द जी सुराणा	रेनीगुंटा	97	प्रथम
5003	नीलू सुमित जी डागा	बीकानेर	94	द्वितीय
4867	कांताबाई राजेन्द्र जी पुनमिया	गंगाधाम (पूना)	93	तृतीय

जैन धर्म चन्द्रिका (पंचम कक्षा)

2919	श्वेता हिम्मतसिंह जी बोहरा	बेगूँ	96	प्रथम
6128	अलका संजीव कुमार जी जैन	फरीदकोट	94	द्वितीय
5963	कांता उत्तमचन्द जी खिंवसरा	बडनेरा	93	तृतीय

जैन धर्म विशारद (छठी कक्षा)

6358	सपना धर्मचन्द जी पितलिया	डूंगला	98	प्रथम
7165	सेनू राकेश जी तातेड़	दिल्ली	97	द्वितीय
174	सरला शांतिलाल जी बोगावत	पांढरकवाड़ा	95	तृतीय
2341	शोभा विजय कुमार जी जैन	जालना	95	तृतीय
7604	विरक्ता एलिजा जी जैन	गंगापुर सिटी	95	तृतीय

जैन धर्म कोविद (सातवीं कक्षा)

4892	निर्मला ज्ञानचन्द जी भलगट	चन्द्रपुर	98	प्रथम
5482	आशा देवेन्द्र जी लोढ़ा	कानपुर	95.5	द्वितीय
4893	राजश्री नरेन्द्र जी मुथा	चन्द्रपुर	94.5	तृतीय

जैन धर्म भूषण (आठवीं कक्षा)

1320	तारा आनन्दराज जी खिंवसरा	बैंगलोर	94.5	प्रथम
4599	विरक्ता सिन्धु जी कवाड़	ब्यावर	90.5	द्वितीय
5824	सीमा संतोष जी सांड	कोलकाता	87	तृतीय

सुशीला बोहरा — संयोजक
राजेश कर्णावट — सचिव
धर्मचन्द जैन — रजिस्ट्रार

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका का विवरण

(फार्म 2 नियम 8 देखिए)

1. प्रकाशन स्थान : जयपुर
2. प्रकाशन अवधि : मासिक
3. मुद्रक का नाम : प्रेमचन्द जैन
4. प्रकाशक का नाम : प्रेमचन्द जैन
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
   दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार
   जयपुर-302003 (राज.)
5. सम्पादक का नाम : डॉ. धर्मचन्द जैन
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : 3 के 24-25, कुड़ी भगतासनी
   हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर-342005 (राज.)
6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जिनका पत्र पर स्वामित्व है : सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
   दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार
   जयपुर-302003 (राज.)

मैं प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

मार्च 2009

हस्ताक्षर-प्रेमचन्द जैन
प्रकाशक

समाचार-विविधा

विचरण-विहार एवं विहार दिशाएँ : एक नजर में

(1 मार्च, 2009)

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 9	27 फरवरी को समता भवन, सिविल हॉस्पिटल रोड, सूरत पधारे हैं। फाल्गुनी चातुर्मासी पर धानेरा जैन स्थानक, कैलाश नगर, सूरत पधारने की संभावना है।
परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 4	: बाड़मेर विराज कर धर्म की महती प्रभावना कर रहे हैं। फाल्गुनी चातुर्मासी पर यहीं विराजने की संभावना है।
साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. आदि ठाणा 6	: जोधपुर के विभिन्न उपनगरों को लाभान्वित कर रहे हैं।
सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4	: भैरून्दा विराज रहे हैं। कुछ दिन यहाँ विराज कर आस-पास के क्षेत्रों को फरसने की संभावना है।
व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 7	: वरोरा (महा.) विराज रहे हैं। फाल्गुनी चातुर्मासी पर हिंगणघाट पधारने की संभावना है।
तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4	: भैरून्दा से पादू होते हुए मेड़ता सिटी की ओर विहार चल रहा है। फाल्गुनी चातुर्मासी पर मेड़ता सिटी पधारने की संभावना है।
विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5	: बेलगांव से विहार कर मध्यवर्ती क्षेत्रों को फरसकर इचलकरंजी की ओर विहार संभावित है।

विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4	: तख्तेशाही रोड, जयपुर स्थित रत्न स्वाध्याय भवन में विराज रहे हैं।
व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 11	: अहमदाबाद के विविध क्षेत्रों को लाभान्वित कर बड़ोदरा की ओर पधार रहे हैं।
महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा 5	: ब्यावर से विहार कर अजमेर की ओर विहार चल रहा है। होली चातुर्मासी पर अजमेर विराजना संभावित है।
व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 7	: बैंगलोर विराज रहे हैं। होली चातुर्मासी पर यहीं विराजने की संभावना है।
व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4	: बड़ोदरा के विभिन्न उपनगरों को फरसकर होली चातुर्मासी पर अहमदाबाद पधारने की संभावना है।
व्याख्यात्री महासती श्री इन्दिराप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 5	: पूना के विभिन्न क्षेत्रों में धर्मप्रभावना कर मुम्बई की ओर विहार चल रहा है।
महासती श्री पुष्पलता जी म.सा. आदि ठाणा 5	: विदर्भ क्षेत्रों में धर्म की महती प्रभावना करते हुए चन्द्रपुर पधारे हैं। होली चातुर्मासी पर यहीं विराजना संभावित है।

आचार्यप्रवर का फाल्गुनी चातुर्मासी हेतु सूरत पदार्पण

परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. आदि ठाणा 9 दिनांक 29 जनवरी को वापी से विहार कर बगवाड़ा, उदवाड़ा, पाटड़ी, अतुल होते हुए 1 फरवरी को बलसाड़ पधारे। यहाँ से 2 फरवरी को विहार कर डूंगरी, 3 फरवरी को वाघलधरा, 4 फरवरी को चीखली, अलीपुर, 5 फरवरी को खारेल, 6 फरवरी को अष्टगांव, 7 फरवरी को ग्रिड होते हुए 8 फरवरी को नवसारी के जूनी दर्जी वाड़ी महादेव सोसायटी स्थित स्थानक भवन में जयघोष के उद्घोष के साथ मंगल-

प्रवेश हुआ। नवसारी में 8 फरवरी से 20 फरवरी तक विराजना हुआ। प्रातःकालीन प्रार्थना, प्रवचन, दोपहर में ज्ञानाराधना, सायंकालीन, प्रतिक्रमण आदि सभी कार्यक्रमों में भाई एवं बहिनों की बहुत अच्छी उपस्थिति रही। रविवार को अधिक उपस्थिति से प्रवचन वाड़ी में हुआ करता था। प्रतिदिन तप-त्याग, व्रत-प्रत्याख्यान का सुन्दर प्रसंग रहा। देवसिय प्रतिक्रमण में भी लगभग 30 श्रावकों की उपस्थिति प्रतिदिन रही। 15 जनवरी को सामूहिक सामायिक-साधना के साथ 60 से अधिक एकाशन व्रत हुए। समवेत स्वर में प्रतिदिन गुरुवर्य श्री के गुणगान एवं वन्दना की भावपूर्ण प्रस्तुति प्रमोदजन्य रही। पूज्य आचार्य भगवन्त ने भी प्रवचनामृत फरमाकर लाभान्वित किया। ज्ञानगच्छ की सतियाँ श्री पुष्पलता जी म.सा. आदि ठाणा ने भी पधारकर दर्शन-वन्दन एवं प्रवचनश्रवण का लाभ प्राप्त किया। नवसारी विराजने के समय सूरत वालों का नित्य दर्शनार्थ पधारने का क्रम रहा। इसके अतिरिक्त मुम्बई, बैंगलोर, चेन्नई, जयपुर, सेलवास, वापी, बलसाड़, सवाईमाधोपुर, जोधपुर आदि क्षेत्रों से अच्छी संख्या में भाई-बहिन पूज्य आचार्य श्री के दर्शनलाभ लेने पहुँचे। 20 फरवरी को सायंकाल 4 कि.मी. विहार कर आचार्यप्रवर कस्बा पधारे। नवसारी के श्रद्धालुओं ने समवेत स्वर में 4 कि.मी. तक पूरे उत्साह के साथ जयनाद करते हुए साथ में विहार किया। यहाँ से 21 फरवरी को मरौली एवं 22 फरवरी को सचीन पधारे। 23 फरवरी को बेस्तान, 24 फरवरी को पाण्डेसरा, 25 फरवरी को उधना होते हुए 26 फरवरी को समता भवन, सिविल हॉस्पिटल रोड, सूरत पधारे हैं। कुछ दिन यहाँ विराजने के पश्चात् होली चातुर्मासी के अवसर पर धानेरा जैन स्थानक, कैलाश नगर, सूरत पधारने की संभावना है। विहार समय में श्री अरूण जी सुराणा एवं श्री हरकचन्द जी जैन ने आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से सजोड़े शीलव्रत अंगीकार किये। नवसारी एवं सूरत के समर्पित श्रावकों ने वापी से नवसारी एवं नवसारी से सूरत तक विहार-चर्या में लाभ लिया। इनमें विशिष्ट सेवा देने वाले भाई हैं- श्री ओमप्रकाश जी जैन, श्री रमेशचन्द जी जैन, श्री नवल जी जैन, श्री बिरदीचन्द जी लोढ़ा, श्री अजीत जी कटारिया, श्री हरकचन्द जी जैन, श्री चन्द्रसागर जी जैन, श्री विजय जी जैन, श्री पुखराज जी जैन एवं श्री पदमचन्द जी मुणोत। श्री महेन्द्र जी शाह 'काका' ने आचार्य भगवन्त की सेवा में नियमित लाभ लिया तथा वे इस वर्ष की चातुर्मास की पालनपुर के लिए विनति कर रहे हैं। सूरत से श्री सुनील जी नाहर, अमरोली से श्री

प्रकाशचन्द जी गाँधी आदि भी सेवा का अपूर्व लाभ ले रहे हैं।

सम्पर्क सूत्र- *(1) श्री स्वरूपचन्द जी बाफना, ए-414, इण्डिया टेक्सटाइल्स मार्केट, चौथी मंजिल, रिंग रोड, सूरत (गुजरात) फोन नं. 0261-2328844, मोबाइल- 09374721094, (2) श्री सुनील जी नाहर-सूरत, 09825125718*

अक्षय तृतीया हेतु बड़ौदा के सम्पर्क सूत्र

परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर 1008 पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा 9 ने अक्षय तृतीया के पावन प्रसंग पर (27 अप्रेल, 2009) साधु मर्यादा के आगारों सहित बड़ौदा विराजने की स्वीकृति फरमाई है। तप एवं दान के इस विशिष्ट पर्व पर गुरु चरणों में नवीन व्रत-प्रत्याख्यान अंगीकार कर तपस्वी साधकों के तप-साधना की अनुमोदना कर कर्म-निर्जरा का लाभ लें। तपस्वी साधक अपने पहुँचने की सूचना निम्न पते पर देवें :-

महेन्द्र कांकरिया-9426179479, **राजेश बाफणा**- 9825035771, 9426403301

बाफणा फाइनेन्स,
एफ.एफ. 13, (द एम्परर),
फतेहगंज मेनरोड़, बड़ौदा (गुजरात)

ठहरने का स्थान :- श्री सौराष्ट्र लेउवा पटेल सेवा समाज
गोरवा इन्डस्ट्रीज एस्टेट के नाका पर,
बी.आय.डी.सी. के पास, एलम्बिक रोड, बड़ौदा (गुजरात)

उपाध्याय प्रवर के सान्निध्य में बाड़मेर में धर्माराधना की लहर

परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 4 थार नगरी बाड़मेर में धर्म की महती प्रभावना कर रहे हैं। उपाध्यायप्रवर के विराजने से यहाँ धर्म-ध्यान, त्याग-तप एवं साधना-आराधना की लहर छायी हुई है। श्रद्धालु भाई-बहिन समयानुसार प्रातःकालीन प्रार्थना, प्रवचन-श्रवण, दोपहर ज्ञानचर्चा एवं सायंकालीन प्रतिक्रमण में प्रसन्नचित्त होकर लाभ ले रहे हैं। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. के ओजस्वी प्रवचन से बाड़मेर के समस्त धर्मप्रेमी बन्धु उत्साहित हैं। विभिन्न क्षेत्रों से श्रद्धालु जन पधारकर उपाध्यायप्रवर के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ ले रहे हैं। 19 फरवरी को यहाँ अलीगढ़ (टोंक) के श्रावक-मण्डल ने उपस्थित होकर चातुर्मास हेतु विनति की। बाड़मेर का श्रावक

मण्डल आतिथ्य सेवा का लाभ ले रहा है। फाल्गुनी पूर्णिमा पर उपाध्यायप्रवर बाड़मेर विराजे, ऐसी संभावना है। तदनन्तर कवास होते हुए पचपदरा की ओर विहार की संभावना है।

सम्पर्क सूत्र- *1. श्री दिनेश जी लुणिया-बाडमेर, 09829792201, 2. श्री धर्मेश जी चौपड़ा-बालोतरा, 09414108191*

युवक परिषद् द्वारा पूज्य आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के जन्म-दिवस पर निबन्ध प्रतियोगिता

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के तत्त्वावधान में परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 71वाँ जन्म-दिवस चैत्र कृष्णा अष्टमी दिनांक 19 मार्च 2009 को मनाया जाएगा। इस दिवस पर निर्धारित कार्यक्रम के अलावा शाखाओं में राष्ट्रीय स्तर पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। निबन्ध का विषय "आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. : व्यक्तित्व और कृतित्व" रखा गया है। इस प्रतियोगिता में सभी आयु वर्ग के बालक, बालिका, श्रावक एवं श्राविकाएँ भाग ले सकते हैं। मौलिक एवं तथ्यात्मक निबन्ध 8 पृष्ठों से अधिक का नहीं होना चाहिए। निबन्ध भेजने की अन्तिम तिथि 30 अप्रेल 2009 रखी गई है। प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार 1000/- द्वितीय 500/- तथा तृतीय 251/- दिए जायेंगे। निबन्ध भेजने का पता- *श्री राकेश जैन, कार्यक्रम प्रभारी-सामायिक स्वाध्याय, शुभम क्लॉथ, पो. सुमेरगंजमण्डी, जिला- बून्दी (राज.), मो. 9413860198*

'कर्म जिज्ञासा' द्विविधा ज्ञान प्रतियोगिता

मैत्री चेरिटेबल फाउण्डेशन, दिल्ली द्वारा साध्वी युगल निधि कृपा लिखित 'कर्म जिज्ञासा' पुस्तक पर प्रतियोगिता दो भागों में आयोजित होगी। प्रथम भाग के अन्तर्गत 100 प्रश्नों के उत्तर पुस्तक पढ़कर 1 मई 2009 तक भेजने होंगे और द्वितीय भाग के अन्तर्गत 100 प्रश्नों के उत्तर स्थानक या निर्धारित केन्द्र पर तत्क्षण एक घंटे में 26 जुलाई 2009 को खुली किताब (कर्म जिज्ञासा) से लिखने होंगे। इससे अधिक जानकारी प्रश्नपुस्तिका में मिलेगी। प्रतियोगियों को 'कर्म जिज्ञासा' उपहार में मिलेगी तथा प्रथम भाग की प्रश्नपुस्तिका का मूल्य 25 रु. है एवं डाक द्वारा 35 रु. होगा। निर्धारित केन्द्रों पर भी प्रश्नपुस्तिका मिल सकेगी। प्रतियोगी 'मैत्री चेरिटेबल फाउण्डेशन', दिल्ली के नाम पर बैंक ड्राफ्ट भेज सकते हैं। जो पुस्तक खरीदना चाहते हैं उनके लिए पुस्तक का मूल्य 100 रु.

और डाक व्यय सहित 125 रु. है। सम्पर्क सूत्र- *मैत्री चेरिटेबल फाउण्डेशन, बी-117, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया, फेज-प्रथम, नई दिल्ली- 110020, 09313093444 (मृदु जैन), 09810160780 (प्रदीप जैन), 09811022253 (रचना जैन)*

जैन जीवन शैली और उसकी वर्तमान में प्रासंगिकता विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी सम्पन्न

दिल्ली- भोगीलाल लहरचन्द भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर तथा श्री जैन श्वेताम्बर नाकोड़ा पार्श्वनाथ तीर्थ ट्रस्ट के संयुक्त तत्त्वावधान में 6-7 फरवरी 2009 को नई दिल्ली स्थित इण्डिया इण्टरनेशनल सेन्टर में 'जैन जीवन शैली और उसकी वर्तमान में प्रासंगिकता' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन हुआ। इसमें देश-विदेश के 50 से अधिक विद्वान सम्मिलित हुए तथा 22 विद्वानों ने अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किए। इस संगोष्ठी के उद्घाटन सत्र की मुख्य अतिथि डॉ. कपिला वात्स्यायन थीं तथा अध्यक्षता डॉ. कर्णसिंह ने की। संगोष्ठी में प्रो. शेलडॉन पॉलक एवं प्रो. गणनाथ ओबेसेकरे विशिष्ट अतिथि थे, जिन्होंने जैन जीवन पद्धति की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि इस पद्धति का विश्वहित में सर्वत्र प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता है। संगोष्ठी के संयोजक डॉ. जितेन्द्र जी शाह ने विद्वत्तापूर्ण गम्भीर व्याख्यान देकर विषय का प्रवर्तन किया। संगोष्ठी में कुल 6 शैक्षणिक सत्र हुए। डॉ. सागरमल जैन, प्रो. फूलचन्द जैन 'प्रेमी', डॉ. महेन्द्र नानावटी (यू.एस.ए.), डॉ. लता बोथरा-कोलकाता, डॉ. हम्पा नागराजैय्या-बैंगलोर, डॉ. विजयकुमार जैन-लखनऊ, डॉ. धर्मचन्द जैन-जोधपुर, डॉ. श्वेता जैन-जोधपुर, डॉ. दीनानाथ शर्मा-अहमदाबाद, प्रो. कमला जैन-दिल्ली आदि विद्वानों ने शोध-पत्र प्रस्तुत किए। समापन सत्र की अध्यक्षता करते हुए प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, कुलपति राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली ने कहा कि जैन जीवन शैली की आज प्रत्येक नागरिक को आवश्यकता है। कहने को तो यह जैन जीवन शैली है, किन्तु मानव जीवन में प्रत्येक मानव के लिए आदर्श होने से सभी के लिए ग्राह्य है। समस्त कार्यक्रमों का संचालन संस्थान के निदेशक डॉ. बालाजी गणोरकर ने किया।

करुणा रत्न अवार्ड के लिए प्रविष्टियाँ आमंत्रित

करुणा-रत्न अवार्ड करुणा से ओतप्रोत उस व्यक्तित्व को मिलता है, जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन करुणा/अहिंसा/शाकाहार के प्रचार-प्रसार में लगा दिया है। इस अवार्ड में प्रशस्ति-पत्र सहित एक लाख रुपए की राशि 'सुराणा एण्ड सुराणा' इंटरनेशनल एटोर्नीज चेरिटेबल ट्रस्ट, चेन्नई के सौजन्य से प्रदान की जाती

है। इस अवार्ड हेतु कोई भी भारतीय नागरिक अपना नामांकन पत्र अपेक्षित सूचनाओं सहित अवार्ड चयन समिति के अध्यक्ष श्री कैलाशमल दुग्गड़, उपाध्यक्ष करुणा अंतर्राष्ट्रीय, 70 शंबुदास स्ट्रीट, चेन्नई-600001 को प्रेषित कर सकता है। -*पदम टाटिया, महामंत्री*

संक्षिप्त समाचार

जोधपुर- संघशास्ता शासनप्रभावक पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलाल जी म.सा. के उत्तराधिकारी संघनायक पूज्य गुरुदेव शास्त्री श्री पदमचन्द जी म.सा. के आज्ञानुवर्ती महास्थविर तपस्वीराज श्री प्रकाशचन्द जी म.सा. आदि ठाणा 4 लक्ष्मीनगर में सुखसाता पूर्वक विराजमान हैं। धर्मध्यान का ठाट लगा हुआ है। आपकी अन्य क्षेत्रों को फरसते हुए होली चातुर्मास हेतु घोड़ों का चौक स्थान में पधारने की संभावना है।

हस्तिनापुर-पूज्या गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के सान्निध्य में 25 जनवरी 2009 को हस्तिनापुर में एक विश्वशान्ति अहिंसा संगोष्ठी आयोजित की गयी। तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद के मैनेजमेंट, डेंटल तथा मेडिकल के छात्र-छात्राओं ने विश्वशांति में अहिंसा का योगदान, जैन धर्म में वर्णित अहिंसा की सूक्ष्म व्याख्या व लिंग परीक्षण एवं भ्रूण हत्या निषेध विषयों पर अपने सारगर्भित भाषा में ओजस्वी विचार रखे और वर्तमान में हो रही हिंसा पर चिन्ता व्यक्त की तथा उन्हें जड़ से उखाड़ने हेतु अपने व्यावहारिक सुझाव रखे।

अंटवालिया (जोधपुर)- आचार्य राममुनि जी के आज्ञानुवर्ती श्री धर्मेश मुनि जी म.सा. आदि ठाणा 5 के प्रभावी प्रवचनों से अंटवालिया के ॐ गुरुकृपा माध्यमिक विद्यालय एवं राजकीय माध्यमिक विद्यालय के लगभग 500 छात्रों ने व्यसनमुक्त जीवन जीने का संकल्प लिया।

जोधपुर- श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन नवयुवक मण्डल, जोधपुर द्वारा 'स्वाध्याय का जीवन में महत्त्व' विषय पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन राष्ट्रीय स्तर पर किया जा रहा है। जिसमें प्रतियोगी को अपने स्वाध्याय की जानकारी देने के साथ नये स्वाध्याय-संकल्प से अवगत करवाना होगा। पाँच फुल स्केप कागज में लिखित निबन्ध के भेजने की अन्तिम तिथि 31 मार्च 2009 है। प्राप्त निबन्धों में से दस श्रेष्ठ निबन्ध लेखकों को 251/- रु. से पुरस्कृत किया जोयगा। सम्पर्क सूत्र- *श्री नितेश नागोता जैन, 175-जैन हाउस, ए.के. जैन एण्ड कम्पनी, भवानीमण्डी-326502, फोन नं. 09413101489*

साण्डेराव- आगम पिपासु उपाध्यायप्रवर श्री विनयमुनि जी 'वागीश' के सान्निध्य में श्री जुहारमल जी लुम्बा, साकरिया के दोनों पुत्र श्री फुटरमल जी एवं श्री सागरमल जी की 31 जनवरी 2009 को साण्डेराव में भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई।

नई दिल्ली- अ.भा. श्वे. स्था. जैन कॉन्फ्रेन्स, नई दिल्ली के प्रधान कार्यालय 'जैन भवन' 12, शहीद भगतसिंह मार्ग, निकट गोल मार्केट, नई दिल्ली में स्वधर्मी भाइयों के ठहरने के लिए अतिथिगृह (धर्मशाला) की सुन्दर व्यवस्था की गई है। जैन भवन में भोजन की सुविधा भी उपलब्ध है। समस्त भारतवर्ष के जैन भाइयों से निवेदन है कि नई दिल्ली पधारने पर जैन भवन में ठहरकर सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं। सम्पर्क सूत्र- 011-23363729, 23365420

मुम्बई- जैन इण्टरनेशनल ट्रेड ऑर्गोनाइजेशन (JITO) के द्वारा 26 अप्रेल 2009 को भारतीय विद्या भवन, चौपाटी मुम्बई में अष्टापद तीर्थ विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया है। इच्छुक व्यक्ति 9821052413 पर सम्पर्क कर सकते हैं। *-प्रताप आर. जैन, सीइओ, जीटो*

लन्दन- SOAS जैन अध्ययन केन्द्र, लन्दन विश्वविद्यालय, लन्दन में एम.ए. करने वाले छात्रों के लिए कुल 5000 पौण्ड की छात्रवृत्ति दिए जाने की योजना है। इच्छुक छात्र अपना सी.वी. ईमेल के द्वारा सितम्बर 2009 के पूर्व भेज सकते हैं।

-Dr. Peter Flugel, jainstudies@soas.ac.uk

लन्दन- जैन अध्ययन केन्द्र (SOAS), लन्दन विश्वविद्यालय द्वारा 12-13 मार्च 2009 को 11वीं कार्यशाला का आयोजन किया जा रहा है। इसमें देश-विदेश के अनेक विद्वान् "Jaina Scriptures And Philosophy" विषय पर अपने शोध-पत्र प्रस्तुत करेंगे। ***-Dr. Peter Flugel***

चेन्नई- श्री प्राज्ञ जैन संघ, चेन्नई का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ, जिसमें सर्वसम्मति से श्री विजयराज खाबिया को संघ का अध्यक्ष मनोनीत किया गया।

चेन्नई- श्री जैन रत्न युवक परिषद्, चेन्नई द्वारा प्रत्येक महीने के अन्तिम रविवार को सामूहिक सामायिक-साधना का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया है। जनवरी माह में आयोजित कार्यक्रम में श्रीमती निर्मला जी संकलेचा एवं फरवरी में आयोजित कार्यक्रम में श्री महावीरचन्द जी मुणोत ने 'सकारात्मक सोच' विषय पर अपने विचार रखे। चेन्नई से 125 युवक-युवतियों के सामूहिक संघ ने बैंगलोर में आयोजित द्वि-दिवसीय कार्यशाला में भाग लिया तथा श्रीमान पी.एस. सुराणा ने तत्र विराजित महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. की सेवा में आगामी चातुर्मास हेतु चेन्नई संघ की विनती रखी।

बधाई/चुनाव

जोधपुर- अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पूर्व महामंत्री श्री जगदीशमल

जी कुम्भट को इण्टरनेशनल एसोसिएशन ऑफ लायन्स क्लब के द्वारा 'श्रेष्ठ सचिव' के रूप में सम्मानित किया गया है। श्री कुम्भट की श्रेष्ठ प्रबन्धकीय सेवाओं का सम्मान रीजन षष्ठ के अध्यक्ष द्वारा 1 फरवरी को किया किया।

बालोतरा- बालोतरा के समर्पित सुश्रावक श्री ओम जी बांठिया को बाड़मेर जिले

में पल्स पोलियो अभियान, सामाजिक-सांस्कृति गतिविधियों, कमजोर वर्ग को सहायता, दुर्घटना एवं आपदा के समय सराहनीय कार्य करने के उपलक्ष्य में जिला स्तर पर 26 जनवरी 2009 को राजस्व मंत्री श्री हेमाराम जी चौधरी तथा बाड़मेर जिला कलक्टर रवि जैन ने प्रशस्ति-पत्र प्रदान कर बाड़मेर में सम्मानित किया।

दूदू- श्री विनोद मेहता पुत्र स्व. श्री कालूसिंह जी मेहता को उत्कृष्ट सेवा के लिए

उपखण्ड स्तर पर क्षेत्रीय विधायक श्री बाबूलाल नागर और उपजिला मजिस्ट्रेट श्री हरिसिंह मीणा द्वारा 'भामाशाह एवं जनसेवा' सम्मान से प्रशस्ति पत्र भेंट कर 26 जनवरी 09 को सम्मानित किया गया। आप गुरुभगवन्तों के प्रति अत्यन्त श्रद्धावान हैं।

बजरिया- सुश्री शिल्पी जैन सुपुत्री श्रीमती विजयलक्ष्मी-प्रेमबाबू जी जैन, बजरिया, सवाईमाधोपुर की नियुक्ति सॉफ्टवेयर इंजीनियर के पद पर इन्फोसिस टेक्नोलोजिज पूना में हुई है। आपकी धार्मिक रुचि भी अच्छी है।

सवाईमाधोपुर- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, सवाईमाधोपुर के वार्षिक चुनाव में 11 सदस्यों की कार्यकारिणी गठित की गयी एवं 2 सदस्य सहवरण के लिये गये। तदनुसार श्री सुबाहु कुमार जी जैन (सर्राफ)-अध्यक्ष, श्री धर्मचन्द जी जैन (करेला)-उपाध्यक्ष, श्री बाबूलाल जी जैन (समिधि)-मंत्री, श्री चौथमल जी जैन (बैंक वाले)-कोषाध्यक्ष, श्री पारसचन्द जी जैन (देवली)-सहमंत्री चुने गये।

श्रद्धाञ्जलि

जोधपुर- सुश्रावक श्रीमान मगराज जी नाहटा का दिनांक 14 फरवरी 2009 को स्वर्गवास हो गया। आपका जीवन सरलता, मृदुता, सहिष्णुता जैसे सद्गुणों से

ओतप्रोत था। आप रत्नवंश के समर्पित श्रावक श्री रावलचन्द जी चौपड़ा के बहनोई थे।

जोधपुर- सेवाभावी, तपस्विनी, श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका श्रीमती उगमकंवर (छोटा बाईसा) धर्मपत्नी सुश्रावक श्री रतनराज जी सिंघवी का 80 वर्ष की वय में 21 फरवरी 2009 को हृदयगति रुक जाने से स्वर्गवास हो गया। देव, गुरु और धर्म के प्रति आप पूर्णतः समर्पित थीं। पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा., आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. प्रभृति संत-सतीवर्ग के प्रति आपकी अटूट श्रद्धा थी। आपने श्री शुभेन्द्रमुनि जी म.सा. की प्रेरणा से निरन्तर 15 वर्षीतप, एक मासखमण, 15 की तपश्चर्या, 11, 10 तथा कई अठाइयाँ आदि की तपश्चर्या की। प्रतिदिन सामायिक एवं पाक्षिक प्रतिक्रमण का आपके नियम था। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं।

किशनगढ़- धर्मपरायण, सरलमना, श्राविकारत्न श्रीमती गुमानदेवी डांगी धर्मपत्नी स्व. श्री कन्हैयालाल जी डांगी का दिनांक 10 फरवरी 2009 को 88 वर्ष की आयु में संथारे के साथ समाधिमरण हो गया। नित्यप्रति 5-6 सामायिक, रात्रि भोजन त्याग, जमीकन्द का त्याग, व्रत-नियम के साथ धर्म आराधना करने वाली सुश्राविका ने अपने जीवन में अठाई, ग्यारह और कई छोटी-बड़ी तपस्याएँ कीं। गुरु भगवन्त आचार्य हस्ती, गुरुदेव हीरा-मान एवं सभी चारित्र आत्माओं के प्रति आपकी अनन्य श्रद्धा-भक्ति एवं समर्पण था। आप अपने पीछे पुत्र श्री राजेन्द्र जी, महेन्द्र जी, गजेन्द्र जी सहित भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं।

ब्यावर- दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी सुश्रावक प्रो. जी.सी. जैन का 63 वर्ष की वय में 1 फरवरी 2009 को त्याग-प्रत्याख्यान व संथारे के साथ समाधिमरण हो गया। आप अत्यन्त सरलमना, मृदुभाषी, धर्मपरायण एवं संयमी वक्ता होने के साथ श्रेष्ठ लेखक भी थे। सामायिक-स्वाध्याय के साथ-साथ सभी सम्प्रदाय के साधु-संतों की सेवा में अग्रणी रहते थे। आपने गरीबों की सहायतार्थ समय-समय पर कई सामाजिक, धार्मिक एवं चिकित्सा शिविरों के भी आयोजन किए।

कपासन- स्वतंत्रता सेनानी सुश्रावक श्री रामलाल जी तलेसरा का 95 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। पूरे राजकीय सम्मान के साथ उनका अन्तिम संस्कार किया गया। उनकी अन्तिम यात्रा में राजस्थान के पूर्व गृहमंत्री सहित बड़ी संख्या में

शासन, प्रशासन तथा समाज के व्यक्तियों ने भाग लिया। नियमित रूप से सामायिक, स्वाध्याय और त्याग-प्रत्याख्यान करने वाले श्री तलेसरा अपने पीछे भरापूरा धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गए हैं।

सूरत- सुश्री सोनिया नाहर सुपुत्री श्री संतोकचन्द जी नाहर (सुपौत्री स्व. श्री गुदड़मल जी नाहर, लाम्बिया-ब्यावर) का असामयिक निधन 1 फरवरी 2009 को हो गया। सुश्री सोनिया बहुत ही होनहार सुसंस्कारी, सेवाभावी एवं धार्मिक संस्कारों से ओतप्रोत थी।

बालोतरा- सुश्रावक श्री मुकनचन्द जी श्रीश्रीमाल बाकरावाला का 75 वर्ष की

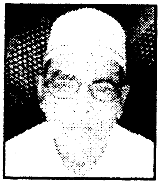

आयु में 30 जनवरी 2009 को स्वर्गवास हो गया। आप रत्नसंघ के प्रति अटूट श्रद्धावान थे। आप नित्य 3-4 सामायिक एवं नियमित स्वाध्याय करते थे। पूज्य उपाध्यायप्रवर मानचन्द्र जी म.सा. के सिवाणा चातुर्मास पश्चात् शेषकाल में बालोतरा तथा अन्य सिवांची क्षेत्रों को फरसने में आपने एवं आपके परिवार ने लाभ लिया था। असाध्य रोग होने पर भी आपकी श्रद्धाभक्ति एवं साधना-आराधना में न्यूनता नहीं आई। संत-सतीवृन्द की सेवा में सदैव अग्रणी रहने वाले श्रीश्रीमाल साहब साधनाशील एवं संघ समर्पित श्रावकरत्न थे।

ब्यावर- धर्मपरायण गुरुभक्त श्री सरदारमल जी पारख सुपुत्र स्व. श्री भूरालाल जी पारख का 12 जनवरी 2009 को 54 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपकी इच्छानुसार मरणोपरान्त नेत्रदान किये गये। आपकी भाभीजी श्री सम्यक्श्री जी म.सा. जिनशासन को दीप्त कर रही हैं। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं।

पाली- सुश्राविका श्रीमती महावीरी देवी लोढ़ा धर्मपत्नी श्री प्रेमचन्द जी लोढ़ा का

29 जनवरी को स्वर्गवास हो गया। आपकी आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. एवं उपाध्याय श्री मानमुनि जी म.सा. के प्रति अगाध श्रद्धा थी। आप नित्य सामायिक-स्वाध्याय में लीन रहती थीं। आपके पुत्र श्री राजेश जी लोढ़ा पाली युवा संघ के अध्यक्ष पद को सुशोभित कर रहे हैं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

❁ साभार-प्राप्ति-स्वीकार ❁

500/- जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

11859 Shri Hemraj ji Khabia (C.A.), Panchwati, Nasik (M.H.)
11860 श्री सुरेश जी मेहता (सी.ए.), कांकरिया बिल्डिंग्स के सामने, चौपासनी रोड, जोधपुर (राज.)
11861 श्री प्रदीप जी गांग, गांग हाउस, मोती चौक, जोधपुर (राजस्थान)
11862 Shri Mahipal ji Gulecha, Choolai, Chennai (Tamilnadu)
11863 Shri Navratanmal ji Jain, Bangalore (Karnataka)
11871 Shri Kamal ji Soni, Jeypore, Korapot (Orissa)
11872 Shri Ramesh ji Jain(Chajed),jeypore, Korapot (Orissa)
11873 Shri Paras ji Soni, Jeypore, Korapot (Orissa)
11874 Shri Bhawarlal ji Bothra, Jeypore, Korapot (Orissa)
11877 श्री आशिष जी पी. सेठिया, महाराजा कॉम्पलेक्स, मेन रोड, शिरपुर,धुलिया (महाराष्ट्र)
11878 Shri Rakesh ji D. Bafna, Shirpur (M.H.)
11880 श्री बसंत जी डांगी, 369, जे-1 रोड़, भूपालपुरा, उदयपुर (राजस्थान)
11881 श्रीमंती शशिकला जी नलवाया, डोरे नगर, सेवाश्रम के पास, उदयपुर (राजस्थान)
11882 Shri Pukhraj M. Lunked ji, Bijapur (Karnataka)
11883 श्री पुनीत जी डोगरा, अनिल चैम्बर, अम्बाड़ी रोड़, वसई (वेस्ट), ठाणे (महाराष्ट्र)
11887 श्री नेमीचंदभाई वी. शाह जी, समरोली, दर्शन सोसायटी, चीखली, जिला—नवसारी (गुजरात)

श्री विमलचन्द जी धोका, मैसूर के सौजन्य से

11875 Shri Megh Raj ji Hingad (Jain), Mysore (Karnataka)
11876 Shri D. Hastimal ji Roonwal(Jain), Mysore (Karnataka)

श्री आर. पदमचन्द जी बाघमार, चेन्नई के सौजन्य से

11864 श्री हर्षित जी गुप्ता, कृष्णा नगर कॉलोनी, भरतपुर (राजस्थान)
11865 श्री जय जी गोयल, मथुरा गेट, भरतपुर (राजस्थान)
11866 डॉ. योगेन्द्र जी शर्मा, सरस्वती निवास, मौहल्ला कोडियान, भरतपुर (राजस्थान)
11867 श्री शोभित जी भंसाली, 121 बी, सेक्टर-24-ए, चण्डीगढ़ (पंजाब)
11868 श्री अभिषेक जी जैन, सैनी कॉलोनी, मकान नं. 100, नई दिल्ली
11869 श्री रोविलजी जैन,लोखन्डुवाला सोसायटी,नारायणपुरा,चार रास्ता,अहमदाबाद (गुजरात)
11870 श्री सुदेश कुमार जी जैन, वर्धमान नगर, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11879 श्री अविनाश जी कोचर, हनुमान मंदिर के पास, कटंगी, बालाघाट (मध्यप्रदेश)
11884 Smt. Mangala ji Chhajed, Deopur, Dhule (M.H.)
11885 श्री महावीर प्रसाद जैन (भनोखर वाले), कजोडी का नगला, गंजखेरली, अलवर (राजस्थान)
11886 श्री गोपालसिंह जी नेगी, सिलगाँव भरदार, रुद्रप्रयाग (उत्तरांचल)
11888 श्री सुदीप जी बालड़, उम्मेद निवास, शिव रोड़, रातानाड़ा, जोधपुर (राजस्थान)
11889 श्री मनोज जी डागा, अरिहंत नगर, दाऊ की ढाणी के सामने, जोधपुर (राजस्थान)
11890 श्री सुमेर सार्वजनिक पुस्तकालय, उम्मेद उद्यान, पब्लिक पार्क, जोधपुर (राजस्थान)

जिनवाणी हेतु साभार

11000/- श्री ताराचन्द जी सांखला, जोधपुर, अपने सुपुत्र चि. अभिषेक संग सौ. प्रियंका का शुभ विवाह दिनांक 14.2.2009 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

5100/- श्रीमती बिलमकंवर-श्री छतरचन्द जी मेहता, जोधपुर, अपने सुपौत्र व श्रीमती शशि-श्री आनन्दचन्द जी मेहता के सुपुत्र श्री कुणाल मेहता के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

2111/- श्री महेन्द्र जी गांग,सूरत सुपुत्र चि.अभिषेक का शुभविवाह सौ.कां. प्रियदर्शनी जी सुपुत्री डॉ. सरोज जी-निर्मल कुमार जी जैन, जयपुर के संग सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में भेंट।

1100/- श्री रतनराज जी, दिलीप कुमार जी, विकास कुमार जी चौधरी, चेन्नई, आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के 99वें जन्म दिवस के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री प्रकाश कुमार जी, कस्तूरचन्द जी मेहता, जलगाँव, परम पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. का 99वाँ जन्म दिवस उमरगाँव में परम पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के पावन सान्निध्य में हर्षोल्लास पूर्वक चतुर्विध संघ की उपस्थिति में सम्पन्न होने एवं पूज्य गुरु भगवन्त के यहाँ विराजने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री धनरूपचन्द जी, अमित कुमार जी मेहता (पीपाड वाले), बैंगलोर, नवनिर्मित सामायिक स्वाध्याय भवन भीलाड़ में परम पूज्य आचार्य भगवन्त 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के पावन पदार्पण एवं चरण स्पर्शन के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री राजेन्द्र कुमार जी, गजेन्द्र सिंह जी डांगी, मदनगंज-किशनगढ़, अपनी माताश्री श्रीमती गुमानदेवी जी की पुण्य स्मृति में भेंट।

1100/- श्री पदमराज जी सुराणा एवं श्रीमती विमला जी सुराणा (जोधपुर वाले), जयपुर, दिनांक 28/02/2009 के अपने वैवाहिक जीवन के 48वें वर्ष में प्रवेश करने के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री प्रेमचन्द जी, राजेशकुमार जी लोढ़ा, पाली, श्रीमती महावीरी जी लोढ़ा धर्मपत्नी श्री प्रेमचन्द जी लोढ़ा के स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

551/- श्री धर्मचन्द जी जैन (श्यामपुरा वाले) सवाईमाधोपुर, सुपुत्र श्री प्रवीण कुमार जी जैन (गगन) के स्थान इन्फोटेक सोफ्टवेअर बैंगलोर में सीनियर सोफ्टवेयर इंजीनियर के पद पर पदोन्नति के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री प्रकाशचन्द जी, सुशील कुमार जी डूँगरवाल (थांवला वाले), बैंगलोर, पूज्य आचार्य भगवन्त के सपरिवार वापी में दर्शन लाभ प्राप्त करने की खुशी में सप्रेम भेंट।

501/- श्री सम्पतलाल जी बाघमार, जबलपुर, पूज्य आचार्य भगवन्त के उमरगाँव रोड़ विराजने पर दर्शनार्थ उपस्थित होने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री सौभाग्यमल जी, हरकचन्द जी, हनुमान प्रसाद जी, महावीर प्रसाद जी, कपूरचन्द जी जैन (विलोता वाले), सवाईमाधोपुर, अपनी माताश्री श्रीमती माँगीबाई जी जैन की 13वीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्रीमती जतनकंवर जी मेहता, जोधपुर, अपने सुपौत्र अंशुल मेहता सुपुत्र श्रीमती कुसुम एवं श्री महेन्द्र जी मेहता के इंजनीयरिंग में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री भंवरलाल जी, सुगनचन्द जी, संदीप जी बोथरा, चेन्नई, आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. के जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्री सुनील कुमार जी सिंघवी, भीलाड़-उमरगाँव, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के भीलाड़ में पावन पदार्पण एवं दर्शन, वन्दन, प्रवचन श्रवण का लाभ प्राप्त होने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्री फूलचन्द जी, सुरेशचन्द जी, सोमचन्द जी, सरूपचन्द जी, संतोकचंद जी, सुभाषचंद जी, ललित कुमार जी नाहर, अंकलेश्वर, सुश्री सोनिया जी सुपौत्री स्व. गुदडमल जी सुपुत्री

श्री संतोकचंद जी नाहर (लाम्बिया-ब्यावर) का 22 वर्ष की आयु में सड़क दुर्घटना में दिनांक 01/02/2009 को आकस्मिक निधन हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

500/- श्री उम्मेदमल जी, मेघराज जी साकरिया, सुमेरपुर, सांडेराव में कमलविहार के उद्घाटन एवं सहोदर भाइयों परम पूजनीय मुनि श्री फूलचन्द जी एवं मुनि श्री सागर जी के द्वारा दिनांक 06/02/2009 को बड़ी दीक्षा सुमेरपुर में ग्रहण करने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्री जगदीशराज जी सिंघवी, जोधपुर, अपनी माताजी श्रीमती उगमकंवर जी सिंघवी की पुण्य स्मृति में भेंट।

जीवदया हेतु प्राप्त साभार

501/- श्री प्रकाशचन्द जी, सुशील कुमार जी डूँगरवाल (थांवला वाले), बैंगलोर, पूज्य आचार्य भगवन्त के सपरिवार वापी में दर्शन लाभ प्राप्त करने की खुशी में सप्रेम भेंट।।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार सहयोग

5100/- श्री प्रेमचन्द जी कोठारी, बून्दी, अपनी सुपौत्री श्री सौ.का. रेखा सुपुत्री श्री विमल जी कोठारी का शुभ विवाह चि. क्षितिज जी (सुपुत्र श्री राजेन्द्र कुमार जी कोठारी) के साथ दिनांक 24/01/2009 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में भेंट।

1100/- श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, अजीत (राज.)।

501/- श्री रतनलाल जी रमेशचन्द जी जैन, सोलतपुरा वाले, अलीगढ़-टोंक, चि. अन्नू सुपुत्र श्री सुरेशचन्द जी जैन संग सौ. कां. रेणु सुपुत्री श्री भेरूलाल जी के 27 फरवरी को सम्पन्न विवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड को प्राप्त साभार

5100/- श्री सम्पतराज जी ज्ञानचन्द जी बाघमार, श्री कालाहस्ती, अपनी माताजी श्रीमती रतनदेवी जी बागमार (धर्मपत्नी स्व. श्री मांगीलाल जी बागमार, मेड़ता सिटी) के दिनांक 26 दिसम्बर 08 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

आगामी पर्व

चैत्र कृष्णा 8	गुरुवार, 19.03.2009	अष्टमी, आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 71वाँ जन्म-दिवस
चैत्र कृष्णा 14	बुधवार, 25.03.2009	चतुर्दशी, पक्खी
चैत्र शुक्ला 6	बुधवार, 01.04.2009	आयंबिल ओली प्रारम्भ
चैत्र शुक्ला 8	शुक्रवार, 03.04.2009	अष्टमी
चैत्र शुक्ला 13	मंगलवार, 07.04.2009	भगवान महावीर जन्म-कल्याणक
चैत्र शुक्ला 14	बुधवार, 08.04.2009	चतुर्दशी
चैत्र शुक्ला 15	गुरुवार, 09.04.2009	पक्खी, आयंबिल ओली पूर्ण

भूल सुधार

जिनवाणी, माह फरवरी 2009 की साभारप्राप्ति में पृष्ठ सं. 123 पर सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर को प्राप्त साभार के अन्तर्गत 11000/- श्री चंचलचन्द जी सिंघवी, जोधपुर, सत्साहित्य के प्रकाशन हेतु अर्थ सहयोग के स्थान पर 11000/- श्री गौतमचन्द जी सिंघवी, उदयपुर, अपने पिताजी श्री उम्मेदचन्द जी सिंघवी की स्मृति में सत्साहित्य के प्रकाशन हेतु अर्थ सहयोग पढ़ा जाए।

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

अनूठा दान छात्रवृत्ति का
जीवन बनता एक विद्यार्थी का

Surana TMT - A perfect vaccination for your constructions.

• Excellent Bond Strength • Greater resistance to Corrosion • Superior Weldability Excellent Ductility and High Bendability • Uniform Properties throughout length • Enhanced Resistance to Fire • Ability to withstand Earthquakes • Bigger savings in steel consumption (almost 18%) • Available in Fe 500 grade with IS 1786 standard

For marketing enquiries, contact : 98410-16666

Corporate Head Office :
29, Whites Road, Second Floor, Royapettah, Chennai - 600 014.
Phone : 2852 5127 (3 Lines) / 28525596 Mobile : 98410-24777
Fax : 28520713 / 1143 E-mail : steelmktg@surana.org.in / silimited@surana.org.in
Website : www.surana.org.in

IS:1786

SURANA™ TMT RE-BARS
yes, the best

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी।

With Best Compliments From :

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

23, Vada malai Street, Sowcarpet
Chennai-600079 (T.N.) Ph. 044-25292727
M. 9841091508

BRANCHES :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph. 26251960

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph. 26243455/56

Balalji Motors
Chennai-50, Ph. 26247077

Padmavati Motors
Jafar Khan Peth, Chennai, Ph. 24854526

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

ज्ञान का एक दीया जलाइये
सहयोग के लिए आगे आइए
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति योजना का
लाभ उठाकर आनन्द पाईये

आदरणीय रत्न बन्धुवर

छात्रवृत्ति योजना में एक छात्र के लिए Rs. 12,000 के गुणक में दान राशि "Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund" योजना के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट (Donations to Gajendra Nidhi are Exempt u/s 80G of Income Tax Act, 1961) से निम्नांकित पते पर भेंजे, पुण्यधन कमाइऐं।

Ashok Kavad
PRITHVI EXCHANGE
33, Montieth Road, Egmore, CHENNAI-600008
Tele Fax 044-43434249, 09381041097

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

GURU HASTI GOLD PALACE

(Govt. Authorised Jewellers) (916. KDM)

22 Ct. Gold ! 24 Ct. Trust !

No. 4 Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 044-26272609, 55666555, 26272906, 55689588

Guru Hasti Bankers :

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

N0. 5, Car Street,
Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 26272906, 55689588

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)
098407 18382
2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD.
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 3 ★ मूल्य : 10 रु.
10 मार्च, 2009 ★ फाल्गुन 2065

धोवन पानी - निर्दोष जिन्दगानी

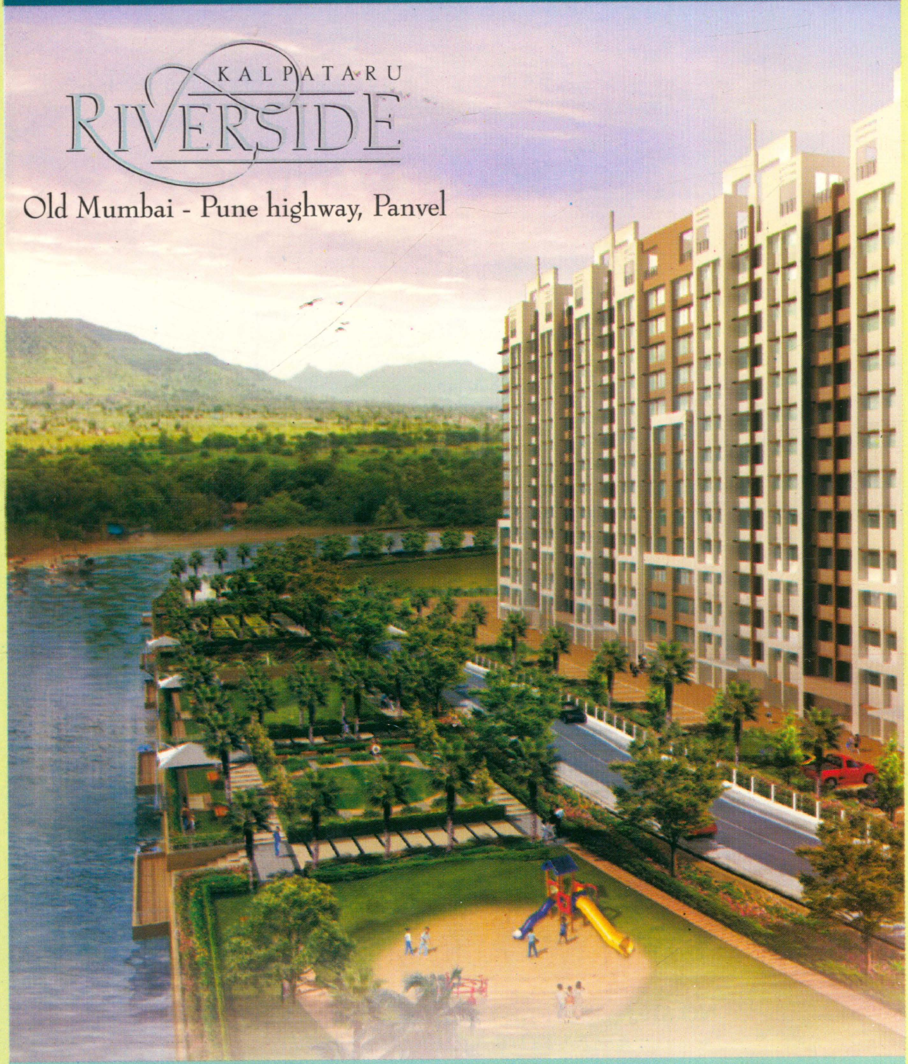

KALPA-TARU®

101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East),
Mumbai - 400 055. • Tel.: 3064 3065, 98339 45470 • Fax: 3064 3131
Website: www.kalpataru.com

स्वामी-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।